www.emanjari.com

मंजरी

स्त्री के मन की

RNI Title Code: BIHBIL02442

अंक 28 वर्ष 2025

लोकगाथा एवं कथाएं

हमारे सांस्कृतिक इतिहास का आईना

छोटी उम्र में
ब्याह नहीं पढ़ाई

जिसने समझा उसने कामयाबी पाई

18 साल के पहले लड़की और 21 साल से पहले लड़के की शादी करना गैरकानूनी है। बाल विवाह अधिनियम 2006 के अनुसार जो बच्चों की उम्र से पहले विवाह के लिए मजबूर करते हैं, वे सजा के पात्र है।

बाल विवाह मुक्त भारत, संकल्प हमारा

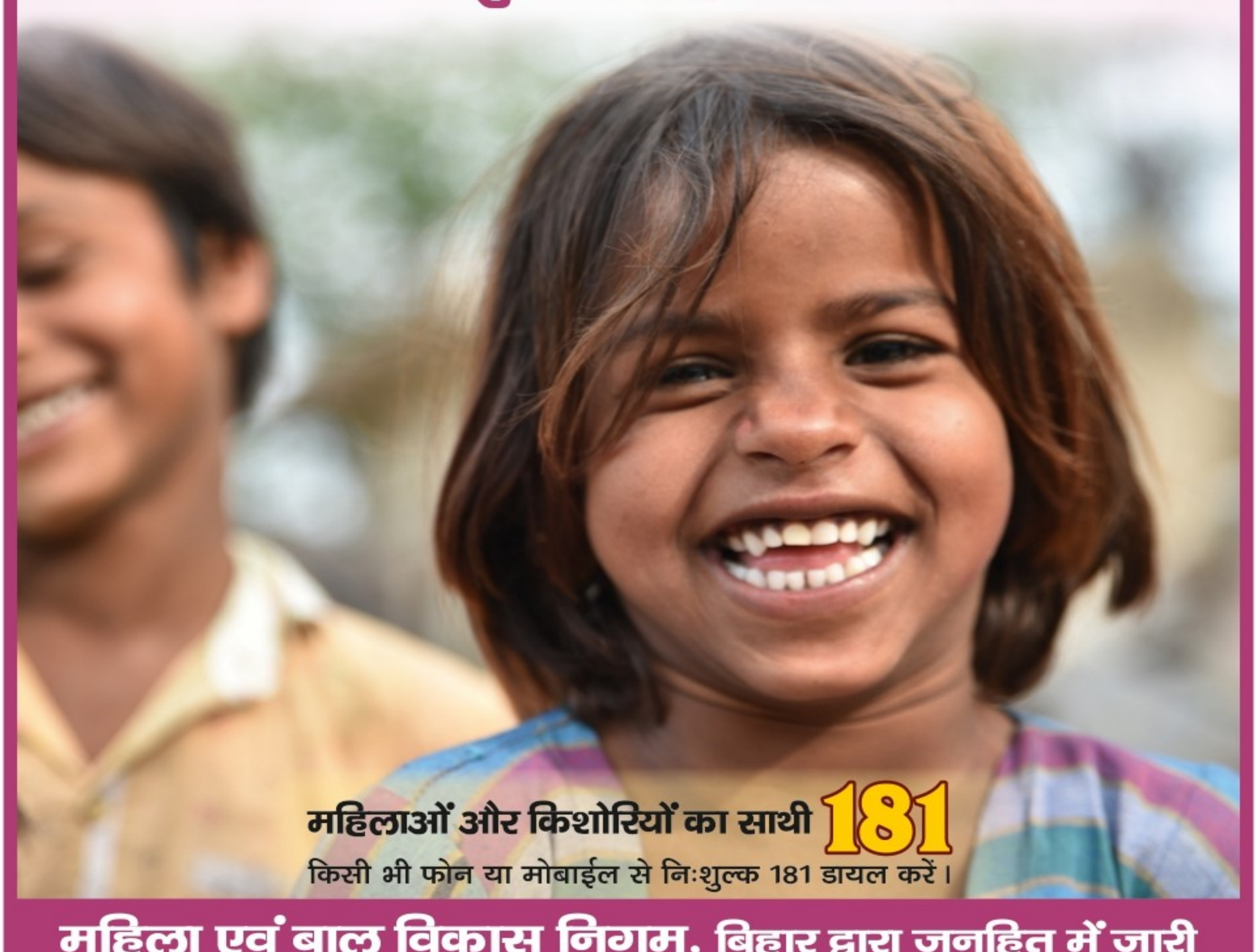

महिलाओं और किशोरियों का साथी 181

किसी भी फोन या मोबाईल से निःशुल्क 181 डायल करें।

महिला एवं बाल विकास निगम, बिहार द्वारा जनहित में जारी

संकल्पना

इक्विटी फाउंडेशन लंबे अरसे से एक वेब पत्रिका शुरू करने के बारे में सोच रहा था। मकसद था महिला और समाज के मुद्दों को शिद्दत से उठाना। जब हमने चीजों को एक साथ कर उसे पत्रिका के रूप में सजाने के बारे में सोचना शुरू किया तो इस क्रम में कई लोगों से जुड़े। हमने महिलाओं को पत्रिका से जोड़ने की कोशिश की। हम दोस्तों से मिले और परिचितों से बात की। महिलाओं के सामाजिक समूहों और शिक्षाविदों के एक साथ जुड़ने के बाद जो स्वरूप सामने आया वह है 'मंजरी'।

मंजरी यानी कोंपल। शाखों में फूटने वाली नन्ही पत्तियां। नई शाखों का सृजन करने वाले इन कोंपल को कुम्हलाने से बचाना जरूरी है नहीं तो पूरे पेड़ का विस्तार कुंद हो जाएगा। ठीक उसी तरह स्त्री के मन की मंजरी को सहेजने की जरूरत है वरना पेड़रूपी समाज विकृति का शिकार हो जाएगा। हमारा प्रयास इसी मंजरी को पुष्पित पल्लिवत करने का है जो औरत की सोच और उसकी को. शिश को सही दिशा प्रदान कर सके।

मंजरी के सृजन के दौरान पहले तो 10–30 लोगों का एक ढीला–ढाला समूह बना। विचार आते गए। अलग–अलग विषयों और मुद्दों पर। समूह में कुछ अनमनी महिलाएं थीं तो कुछ सहानुभूति दिखाने वाले पुरुष भी। कुछ महज एक या दो बैठकों में शामिल हुए तो कुछ जब मन में आया, आ गए। बाकी बचे लोगों ने 'मंजरी' को मुकाम पर ले जाने का दायित्व अपने कंधों पर लिया। 'मंजरी' का लक्ष्य एक ऐसा मंच उपलब्ध कराना है जहां बुद्धिजीवियों को उनकी खुराक मिले तो शोधकर्ताओं की जिज्ञासा शांत हो। क्रियान्वयन के लिए बहस और तर्क के रास्ते हमेशा खुले रहें। इक्विटी की लगातार कोशिश रही है शोध और क्रियान्वयन के बीच की दूरी को पाटना। ऐसे में हमारा मानना है कि शोध तब तक अप्रासंगिक हैं जब तक कि इनका लोगों की जिंदगी और उनके क्रियाकलापों से जुड़ाव न हो। ठीक इसी तरह सिविल सोसायटी के तौर पर अगर हम जमीनी सच्चाई से वाकिफ न रहें, जिनमें सामाजिक प्रकियाएं और ऐतिहासिक मूल्यों का समावेश है और जो समाज में रहने वाले लोगों के मूल्यों और उनके चरित्र को आकार देते हैं, तो किसी भी कोशिश का कोई मतलब नहीं रहता है।

'मंजरी' एक उद्यम है, कियाशीलता को शोध आधारित रचना और आलोचना के नजरिये से देखने का जो महिला अधिकारों के साथ–साथ जीवन के हर पलू को इंगित करे। नियमित गैर सरकारी संगठनों और अकादमिक तंत्रों से इतर 'मंजरी' राजनीति और आदर्शवादिता को लांघ कर सामाजिक, राजनीतिक और आर्थिक सुधारों को सांस्कृतिक संवेदनशीलता के आधार पर मापती है। 'मंजरी' उन तमाम कार्यकर्ताओं, विद्वानों, शिक्षाविदों, पत्रकारों, प्रोफेशनल, गृहणियों और नीति निर्धारकों द्वारा पढ़ी जाएगी जो किसी समस्या के लिए समाधान आधारित नवीन दृष्टि और पृथक सोच रखते हैं। यह पत्रिका अपने पाठकों को जेंडर आधारित मुद्दों को जैविक और सामा. जिक आधार पर परखने की छूट देती है। व्यक्ति और समाज की विचारधारा में जेंडर को लेकर क्या बदलाव आये और उनका क्या असर हुआ, इसकी पूरी पड़ताल करने की आजादी लोगों को होगी। यह पत्रिका एक कोशिश है पड़ताल की प्रवृत्ति को जगाने की ताकि लोग तेजी से बदलते और विविधताओं से भरे समाज में पसूी क्षमता से काम करने को तैयार हो सकें जिसमें महिलाओं के प्रति भेदभाव भी एक अहम मुद्दा होगा। महिला समानता और अधिकारों पर 'मंजरी' के दखल से उन बेशुमार कार्यकर्ताओं, संगठनों और विद्वजनों को फायदा होगा जो दहेज, यौन प्रताड़ना, महिला अधिकारों, महिला आरक्षण, आर्थिक सुधार और अल्पसंख्यक समुदायों के निजी कानूनों में रुचि रखते हैं।

पत्रिका का मकसद

इक्विटी फांडेशन खुद को सुविधाविहीन महिलाओं को उनकी पूर्ण क्षमता से अवगत कराने और समाज में उनके कियाशील प्रभुत्व को स्थापित कराने की दिशा में वाहक के तौर पर देखता है। देश के विकास के हर क्षेत्र में महिलाओं की समान भागीदारी की राष्ट्रीय नीति तभी सफल हो पाएगी जब महिलाओं की भूमिका और उनके योगदान को कमतर आंकने वाले संस्थान और विचारों को हतोत्साति किया जाये या उनका पूरी तरह सफाया किया जाय। 'मंजरी' की परिकल्पना समाज और अर्थव्यवस्था में महिलाओं के जीवन और उनके स्तर को प्रभावित करने वाले विचारों के निर्माण, विकास और उनके प्रसार के लिए की गई है। बारहवीं पंचवर्षीय योजना के परिप्रेक्ष्य में समानता संबंधी मुद्दों को इस प्रकार समग्र रूप में देखने की जरूरत है जो असमानता की अंतरवर्गीय विशेषताओं को जाहिर कर सके। समानता पर आधारित 'मंजरी' के ज्यादातर आलेख भिन्न–भिन्न समूहों को निशाने पर रखते हैं जो कुछ हद तक बेहद जरूरी भी है। इसलिए यह पत्रिका कुछ समूहों के कुछ विशेषाधिकारों के पूर्ण निष्कासन और अंतरवर्गीय दृष्टिकोणों के स्थापन के बीच नियंत्रक की भूमिका में होगी जो नीति निर्धारण और योजनाओं के क्रियान्वयन के दौरान असमानता को उसके तमाम स्वरूपों के साथ सामने रखने में कारगर होगी। ऐसे में इसका मकसद लैंगिक भेदभाव के निर्मूलन की ओर वह विवेचनात्मक चर्चा छेड़ने का है जो वर्तमान परिदृश्य में शोधों का एजेंडा तय कर सके और एक बेहतर वैकल्पिक प्रस्ताव का सृजन कर सके। अब तक यह संगठन कार्यशाला, कांफ्रेंस और अन्य सार्वजनिक आयोजनों के जरिये अपनी प्रतिबद्धता दर्शाता रहा है लेकिन अब इस पत्रिका के माध्यम से यह क्षेत्रीय, राष्ट्रीय और अंतरराष्ट्रीय अतिथि लेखकों, जिनमें विद्वजन, अधिवक्ता, सरकार, पत्रकार, फिल्म निर्माता, कवि और सामाजिक कार्यकर्ता हैं, को जोड़ने की कोशिश कर रहा है।

संरक्षण

पद्मश्री डा. उषा किरण खान
प्रख्यात लेखिका एवं साहित्यकार

मणिकांत ठाकुर
प्रख्यात पत्रकार

प्रो. भारती एस. कुमार
प्रोफेसर (सेवा.) इतिहास, पटना विवि

डा. रेणु रंजन
प्रोफेसर (सेवा.), समाज शास्त्र पटना विवि

परामर्श

डा. शरद कुमारी
सचिव, बिहार महिला समाज

अंजिता सिन्हा
पत्रकार

डा. मधुरिमा राज
स्वतंत्र लेखिका एवं शोधकर्ता

सुजाता गुप्ता
लेखिका, कवयित्री एवं अनुवादक

संपादकीय

भारत विविधताओं का देश है, जहां की लोकगाथाएँ हमारी सांस्कृतिक विरासत का अभिन्न हिस्सा हैं। ये गाथाएँ न केवल मनोरंजन का साधन हैं, बल्कि समाज की परंपराओं, विश्वासों और मूल्यों को भी उजागर करती हैं। लोकगाथाएँ किसी क्षेत्र विशेष की सांस्कृतिक पहचान को व्यक्त करती हैं और पीढ़ी दर पीढ़ी मौखिक रूप से आगे बढ़ती हैं। लोककथाएँ मानव–समूह की उस साझी अभिव्यक्ति को कहते हैं जो कथाओं के विभिन्न रूपों में अभिव्यक्त होता है। सबसे महत्त्वपूर्ण बात यह है कि कुछ निश्चित कथानक रूढ़ियों और शैलियों में ढली लोककथाओं के अनेक संस्करण, उसके नित्य नई प्रवृत्तियों और चरितों से युक्त होकर विकसित होने के प्रमाण है।

ये लोककथाएँ सत्य घटनाओं पर आधारित हैं, जबकि कहानियाँ काल्पनिक होती हैं। इन लोक कथाओं का उद्देश्य यह है कि कैसे पौराणिक कथाओं के जरिए लोगों के बीच एकता, आपसी प्रेम, भाईचारे और सक्षम होने का ज्ञान दिया जाता है। इनकी पहचान यही है कि लोक कथा एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी यात्रा करती हैं।

लोकगाथाएँ भारतीय समाज में गहरी जड़ें जमाए हुए हैं। ये गाथाएँ नायकत्व, पराक्रम, प्रेम, बलिदान और समाज के प्रति जिम्मेदारी की भावना को उभारती हैं। इनमें न केवल ऐतिहासिक घटनाओं का विवरण मिलता है, बल्कि इनमें देवी–देवताओं, राजाओं, रानियों और साधारण व्यक्तियों की कहानियाँ भी शामिल होती हैं। ये गाथाएँ हमें यह समझने में मदद करती हैं कि भारत का समाज किस प्रकार समय के साथ विकसित हुआ है।

कुछ प्रमुख लोकगाथाएँ
क .राजस्थान की लोकगाथाएँ
ख. महाराष्ट्र की लोकगाथाएँ
ग. पूर्वोत्तर भारत की गाथाएँ
घ. बिहार और उत्तर प्रदेश की गाथाएँ
ङ पंजाब की लोकगाथाएँ

लोकगाथाओं की विशेषताएँ–
1. रचयिता का पता न होना,
2. प्रामाणिक मूल पाठ का न मिलना,
3. संगीत और कभी–कभी नृत्य की अनिवार्य स्थिति,
4. स्थानीय प्रभाव,

मुख्य संपादक

नीना श्रीवास्तव

संपादक

दीपिका झा

शोध

नीना श्रीवास्तव
दीपिका झा

आवरण चित्र

वरिष्ठ अतिथि कलाकार
अनु प्रिया

लोगो डिजाइन

दीया भारद्वाज

प्रबंधन/व्यवस्था

राहुल कुमार
कुमार गौरव

प्रकाशन

इक्विटी फाउंडेशन

संपर्क

इक्विटी फाउंडेशन
123 ए, पाटलीपुत्र कॉलोनी
पटना, 13
फोन : 0612.2270171

ई–मेल
equityasia@gmail.com
वेबसाइट
www.emanjari.com

5. मौखिक स्थिति,
6. अलंकृत शैली के अभाव के साथ–साथ स्वाभाविकता का पुट,
7. उपदेशों का अभाव,
8. रचयिता के व्यक्तित्व का अभाव

ये गाथाएँ प्राचीन काल से मौखिक रूप में प्रस्तुत की जाती रही हैं। लोकगाथाएँ आमतौर पर स्थानीय भाषाओं और बोलियों में होती हैं, जिससे वे आम जनता से जुड़ती हैं। इनमें नैतिकता और प्रेरणा का समावेश होता है। लोकगाथाओं को अक्सर संगीत और नृत्य के साथ प्रस्तुत किया जाता है, जो उन्हें और आकर्षक बनाता है।

लोककथाएँ जीवन के कई अलग–अलग पहलुओं के बारे में बताती हैं। वे खुशियों और दुखों, जानवरों और जादुई प्राणियों और नायकों और खलनायकों के बारे में बता सकती हैं। वे डरावनी, मजेदार या रोमांचक हो सकती हैं। विभिन्न प्रकार की लोककथाएँ मनोरंजन कर सकती हैं, सबक सिखा सकती हैं या ऐसी चीजें समझाने की कोशिश कर सकती हैं जो लोगों को समझ में नहीं आती हैं। इन कहानियों को रोजमर्रा की जिंदगी के सबक और उपयोगी जानकारी को आसानी से समझने योग्य प्रारूप में प्रस्तुत करने के तरीके के रूप में पीढ़ियों के बीच साझा किया गया था।

आज के आधुनिक युग में लोकगाथाओं का संरक्षण एक चुनौती बन गया है। बदलती जीवनशैली और तकनीकी प्रगति के कारण नई पीढ़ी इनसे दूर होती जा रही है। लेकिन साहित्य, नाटकों, फिल्मों और संगीत के माध्यम से इन गाथाओं को जीवित रखने के प्रयास किए जा रहे हैं। इनकी कहानियाँ समाज को जोड़ने और प्रेरित करने का कार्य करती हैं। हमें इन गाथाओं को संरक्षित करने और उनकी विरासत को अगली पीढ़ियों तक पहुंचाने का प्रयास करना चाहिए।

यद्यपि अब अनेक लोककथाएं लिपिबद्ध की गई हैं और अब तो टीवी और वीडियो के माध्यम से भी ये कथाएं प्रस्तुत की जा रही हैं, पर अभी भी लोककथाओं का इतना विशाल भंडार है कि यदि पुरखों की स्मृति को खंगाला जाए तो संभवतः अनेक ग्रंथ तैयार हो जाएं। आज समय इतनी तीव्र गति से बदल रहा है कि इसने जीवन जीने की पद्धति समाज और भावी पीढ़ी की सोच रुचियां बदल दी हैं पर समाज के उज्जवल कल के लिये, उन्हें संस्कारित करने तथा जीवन में नैतिक मूल्यों के रोपण हेतु आज भी इन लोक कथाओं की आवश्यकता है। भारतीय लोकगाथाएँ और कथाएं हमारे सांस्कृतिक इतिहास का आईना हैं और 'मंजरी' का हमारा यह अंक हमारी इस सांस्कृतिक धरोहर को समर्पित है।

N srivastava

नीना श्रीवास्तव

श्रोतः अलका प्रमोद (www.rekhta.org)

अनुक्रम

1

27

7

5

अनु प्रिया
(कलाकार / लेखिका)

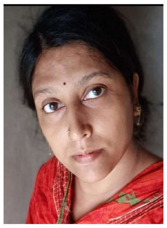

सुपौल बिहार में जन्मीं अनु प्रिया जी के साठ से अधिक किताबों के आवरण एवं पत्र–पत्रिकाओं में रेखाचित्र प्रकाशित हो चुके हैं। साहित्य अकादमी, राजकमल प्रकाशन, वाणी प्रकाशन, अल्टरनोट प्रकाशन, अगोर प्रकाशन, प्रकाशन विभाग आदि से किताबों के आवरण पर निरंतर इनके द्वारा बनाये गए चित्र का प्रकाशन होता रहता है।

25

थीम पेपर

कुछ कागद-लेखी, कुछ आंखन-देखी

सत्यदेव त्रिपाठी

लेखक साहित्य, कला एवं संस्कृति से जुड़े विषयों के विशेषज्ञ हैं।

गाथा शब्द का मूल वेद में

यूँ यह विधा भले खाँटी लोक की हो, पर गाथा शब्द का मूल वेद में सीधे मिलता है। वहाँ शब्द है 'गाथिन', जिसका अर्थ है 'आख्यानक' याने 'आख्यान कहने वाला'। इसी आख्यान का मुख्य भाग 'आख्या' आजकल हिंदी प्रदेशों के कार्यालयों की फाइलों में जो नोट लगाये जाते हैं, उसके लिए खूब-खूब प्रचलित व मान्य हो गया है। इसी तरह 'आर्टिकल' के लिए अखबा. रों में 'स्टोरी' चल पड़ा है। छपी है रपट, पर कहेंगे, ''मेरी स्टोरी देखी आपने?'' तो आख्या और स्टोरी में नोट, टिप्पणी, रिपोर्ट, बयान, स्टेटमेंट, घटना आदि सब कुछ आ जाता है।

फिर गाथिन से गाथा तो सहज है- भाषिकता के बिलकुल अनुसार है- आख्यान कहने वाला गाथिन, तो गाथिन ने जो कहा-सुनाया, वह गाथा। और 'गाथा' शब्द ऐसा चला त्रिकाल में अमर होकर स्थापित हो गया। लोक कथाएँ हमारे यहाँ घरों में 'मां कह एक कहानी' की मुख्य धारा में सुनी-सुनायी जातीं और गाँवों-मुहल्लों में अनौपचारिक, पर नियमित बैठकों की

श्रिंगार होतीं। और लोक गाथाएं होतीं वे बड़ी–बड़ी कहानियाँ, जो आयोजित होकर बड़े समूह में सुनायी जाती थीं।

जैसा कि कहा गया कि गाथा में गाया भी जाता है और कहा–सुनाया भी जाता है, तो गाथा–गायक व गाथा वाचक भी हो सकता था, लेकिन चलन में युग्म बना– गाथा–गायक व कथा–वाचक का। पर सच यह है कि कथा–गाथा दोनों में कहा–सुनाया भी जाता है और गाया भी जाता है। निचोड़ यह कि गाथा सुनाने वाला गाते–गाते कहता है और कथा वाला कहते–कहते गाता है। इसी वजन पर अच्छा सूत्र बना– कथा, जो कहते–कहते गायी जाती है और गाथा, जो गाते–गाते कही जाती है। याने मूँड़–कपार सब एक ही है, लेकिन मूँड़ मूँड़ है, तो कपार कपार है।

उत्पत्ति, व्याप्ति एवं विलुप्ति

लोक गाथाओं की यह महत्ता ही कही जायेगी कि उनकी उत्पत्ति मूलतः समूह में होती है। इसलिए भी ये किसी के नाम से नहीं जानी जातीं। उनका जनक, सर्जक यही लोक होता है। यूँ यह प्रक्रिया किसी भी गीत–कलादि की उद्भवकालीन स्थिति का सच है, उसकी उत्पत्ति से बावस्ता है। कलाएँ सदा लोक में ही जन्मती हैं। अभिजात वर्ग में किसी कला का जन्म हो ही नहीं सकता। वे लोग अपनी समृद्धियों–सुविधाओं में मस्त–मुब्तिला होते हैं। तो, जब दुनिया में कुछ न था। आदमी बिलकुल जंगलों में, कबीलों में रहता था। तब कबीलों के लोगों की आपस में सुरूरी मस्ती के दौरान बोलते–चिल्लाते हुए धीरे–धीरे सुर–स्वर बने होंगे। शब्द देने लगे होंगे अर्थ...। मनमानी उछल–कूद के बीच पाँवों ने भटकते हुए स्म पर आना... फिर थिरकना सीखा होगा।

भौतिकवादी सोच में उत्पत्ति प्रक्रिया की सामूहिक प्रवृत्ति को एक साथ श्रम करने से जोड़ दिया गया है। श्रम के दौरान मुँह से निकलते शब्दों की सामूहिक ध्वनि–लय के रूप में गीत–संगीत व कदम–ताल की पद–गति से नृत्य... आदि का प्रादुर्भाव होना बहुत मशहूर विवेचन है। लेकिन इसमें पिज जाने के बाद ये कलाएँ सृजन में व्यक्ति–प्रसूत एवं प्रदर्शन व प्रस्तुति में सामूहिक होने लगीं। व्यक्ति–सृजन की प्रक्रिया वर्ड्सवर्थ के 'स्पोंटेनियस ओवरफ्लो' से लेकर पंत के 'आह से उपजा होगा गान' की साखी बनी। कुल मिलाकर यह कि लोक कलाएँ सबकी होते हुए भी अपनी प्रकृति में स्वतंत्र होती हैं। जनता की सम्पत्ति होते हुए भी स्वायत्त होती हैं। कोई अपने लिखे का दावा नहीं करता। अपने नाम का मोह नहीं। यह परम्परा भी थी कि अपना नाम कोई न देता। आज जैसा न था कि कोई छोटी–सी भी रचना लिखी और परिचय 15 पृष्ठों का उसके पहले आ गया। और पूछते फिरे, ''आपने मेरी रचना पढ़ी''? तब यह परम्परा साहित्य में भी थी– जैसे सबने लिख के व्यास के नाम कर दिया अठारहो पुराण। या हर लेखक ने व्यास नाम रख लिया– आज की भाषा में ब्रांड हो गया नाम 'व्यास'। ये लोकगीत तो कर्ण परम्परा में भी चलते थे... संस्कार गीत आज भी वैसे ही चलते हैं– सात पीढ़ियों से लोग सुन रहे हैं।

कलाएँ पूरे लोक की निधि

इस प्रकार लोक की समस्त कलाएँ सचमुच ही पूरे लोक की निधि होती थी– 'सम्पत्ति' भी कह सकते हैं। इन पर किसी का निजी अधिकार (कॉपी राइट) नहीं होता था। जैसे नदी के पानी पर किसी का अधिकार नहीं– राजा–रंक सभी उसे पीयें–अघायें और जायें– पानी को अगले आने वाले के लिए छोड़ दें। उसी तरह किसी लोकगाथा या लोककथा पर किसी का हक नहीं होता। उसे कोई भी कहीं भी गा–बजा सकता है। लोक कलाओं की ही नही, समस्त लोक की यही सबसे बड़ी खासियत होती है। इसी के चलते हर लोक व कला अलग–अलग गायक या प्रस्तोता में आकर कुछ न कुछ बदल जाती है। यही होना इसे एकरूपता के खतरे (यूनिफॉरमिटी अ डेंजर') से बचाता है। लेकिन किंचित बदलावों के

बावजूद कहीं गहरे व मूलभूत रूम में वह एक ही रहती है– 'विविधता में एकता' की सार्थकता।

लोक गाथा की व्याप्ति पूरे देश के लोक में अलग–अलग कुछ समान नामों से है। कहीं महाराष्ट्र में पोवाड़ा या पांवड़ा या पंवारा, कहीं गुजरात में कथागीत, तो राजस्थान गीतकथा। हमारे उत्तर प्रदेश में लोकगीत ही कहते हैं, लेकिन बोलचाल में विधा–नामों से ही जाना जाता है– 'आल्हा' हो रहा है। 'बिरहा' हो रहा है। अल्हइत आये हैं, बिरहिया आये हैं, सोहर हो रहा है। हाँ, महाराष्ट्र का पोवाड़ा या पांवड़ा शब्द लोकगीत के लिए नहीं, पर उसी अर्थ में खूब चलता है रोज की बोलचाल में, जिसका अर्थ होता है– बनायी हुई बात या घटना को बढ़ा–चढ़ा के कहना– 'अब बंद करा अपना पँवारा'। आल्हा, राजा भरथरी व गोपीचंद, पद्मावत व ढोला मारू रा दूहा... आदि ख्यात कथाएँ ज्यादातर मध्यप्रदेश–राजस्थान से ताल्लुक रखती है। यहाँ बहुत मशहूर सारंगा–सदाब्रिज भी गुजरात तक पायी जाती है, जिससे पता चलता है कि लोकगाथाएँ किसी संचार–साधन की मोहताज न थीं। वे कर्ण–परम्परा से अपनी यात्राएँ कर लेती थीं। अपने प्रांत के योद्धाओं में वीर कुंवर सिंह की काव्य–कथा चलती है। वे भी मूलतः बिहार के थे, लेकिन स्वतंत्रता–संग्राम में उन्होंने मेरे आजमगढ़ से आजादी का बिगुल फूंका था। 1960 के दशक में उन पर 'कुंवर महाकाव्य' लिखा मिर्जापुर में जन्मे, लेकिन बनारस को कर्मभूमि के रूप में चुनने वाले चन्द्रशेखर मिसिर ने। इस कथा को भी पिछले वर्षों में लोक में गाया जा रहा था।

विद्रूप की सारी हदें पार

लेकिन लोकगीतों की व्याप्ति के इस मोड़ पर इनकी विलुप्ति की चर्चा अफसोस का सबब है कि आज ये सारे ही कलारूप जीवन में रवाँ नहीं रहे, लुप्त हो चुके हैं। इतिहास की चीज बन गये हैं। अब लोक के नाम पर पहले के हुए–लिखे की चर्चा होती है, चर्वण होता है– वह भी ज्यादातर सरकारी व कुछेक निजी संस्थानों के लिए या विश्वविद्यालयों में पढ़ने–पढ़ाने व शोध आदि के लिए। ऐसे कामों के लिए खास तौर पर सरकारी पुरस्कार बने हैं, जिनके लिए प्रकल्प–कार्य (प्रोजेक्ट वर्क) होते हैं, जिनके लिए ढेरों संस्थान बने हैं। तरह–तरह से खाना–कमाना जारी है, पर लोकगाथा या किसी लोकरूप के सृजन को लेकर कोई प्रयत्न नहीं हो रहा। बस, अतीत के कामों के कसीदे काढ़–काढ़ के, वही–वही इतिहास बता–बता के सबका कारोबार चल रहा है। इसीलिए उस सारे पिष्टपेषित को फिर–फिर से पीसने से बचने हेतु स्वानुभव से अपने अंचल की लोकगाथाओं की कुछ नयी चर्चा यहाँ योजित की जा रही है। पर इस बोतल में भी शराब पुरानी ही है।

हाँ, पहले कैसेटों में भर के... और अब वीडियो को यू ट्यूब पर लगाके इस शरीर–संचालित कला को यांत्रिक बना दिया गया है। इस माध्यम पर लोककला–रूपों के अनगिनत संस्करण भरे पड़े हैं। इनमें कुछ भी कैसे भी चल रहा है। इतनी बदमली फैली है कि क्या कहा जाये... इन्हें इतनी भी तमीज नहीं कि 'आल्हा' वीर काव्य है, उसे कैसी–कैसी लोचदार धुनों–सुरों में गाया जा रहा है। उस पर लड़कियाँ नाच रही है... विद्रूप की सारी हदें पार हो गयी हैं। यह वस्तुतः अश्लील है। कल को ये आल्हा को मोजरा में पेश कर–करा देंगे, तो कोई अनहोनी न कही जायेगी। हीरा बिरहिया के फोटो लगाके पार्श्व में लड़कियों से गवाया जा रहा है। इन यांत्रिक प्रस्तुतियों एवं समाज माध्यमों (सोशल मीडिया) पर व्यवस्था का कोई अंकुश नहीं– 'भावइ मनहिं करइ सोइ सोई' का बाजार गर्म है, जो दुर्भाग्यपूर्ण है।

(साभारः apkaakhbar.in)

उत्तर–पूर्व बिहार

दलित–बहुजन लोक गाथाएं

डॉ संयुक्ता भारती

बिहार उन प्रांतों में एक है जहां के दलित–बहुजन हिंदू धर्म से जुड़े मिथकों की तुलना में अपने लोक देवताओं को मानते हैं। इन लोक देवताओं में गौरेया बाबा, भरथरी बाबा, दीना भदरी, राजा सलेहस से लेकर रेशमा–चौहरमल तक शामिल हैं। हालांकि इन सबसे जुड़ी कहानियां आज भी अलिखित हैं और लोक साहित्य की श्रेणी में शुमार की जाती हैं।

दरअसल, लोक साहित्य किसी भी क्षेत्र के आम जीवन का प्रतिबिंब होता है। इसमें उस क्षेत्र विशेष की रीति–रिवाज, रहन–सहन, विचार–व्यवहार, मान्यताएं सभी परिलक्षित होते हैं। ध्यातव्य है कि लोक साहित्य जो आम जीवन और बहुसंख्यक लोगों का दस्तावेज होता है, वह किसी तय मानक या शास्त्रीय शिष्टता से मढ़ा नहीं होता, इसलिए इसका स्वरूप लचीला होता है। इसमें गति भी होती है जो इसकी उपयोगिता और रोचकता बनाये रखती है। इस तरह यह अलिखित होने के बावजूद दीर्घजीवी बना रहता है।

उत्तर–पूर्व बिहार कई लोक गाथाओं से समृद्ध है, जो जीवन के सभी रंगों से जुड़ा है। महाजनपद काल में इन क्षेत्रों में अनार्यों का वास माना जाता है। साथ ही यह क्षेत्र बौद्ध धर्म के तंत्रयान शाखा, प्रकृति पूजक बहुल क्षेत्र भी माना गया है। अतः लोक गाथाओं के साथ विशेषता देखने को मिलती है कि वे अधिकतर दलित–बहुजन समाज के लोगों से जुड़े होते हैं

लोक देवता और उत्सव

या यूं कहें कि लोक शब्द के स्थानीय अर्थ के साथ बहुजन/बहसंख्यक जन जुड़े हैं, जिनका इतिहास कलमबद्ध होने से वंचित रह गया या कर दिया गया और उनका इतिहास मिथक बन गया। यही इतिहास लोक कंठ में जीवित रह कर मौखिक इतिहास बन कर गेय पदों (गीतात्मक पद) में ढल गया।

इन क्षेत्रों में अनेक लोक गाथाएं हैं, जो बहुजन समाज की गाथाओं से जुड़ें हैं या जिनके नायक–नायिक बहुजन समाज से आते हैं। इन समाजों के लोग अपने–अपने लोक देवी–देवताओं की पूजा पिंडी बनाकर करते हैं। कहीं–कहीं पर चबूतरा और डीह आदि भी सामने आता है। इन लोक गाथाओं में अंधविश्वास भी सामने आता है।

बिहुला विषहरी

बिहार के भागलपुर प्रमंडल व आसपास के इलाके, जिसे अंग क्षेत्र भी कहा जाता है, की लोकप्रिय व प्रसिद्ध लोक गाथा है– बिहुला विषहरी। इस गाथा में दो नायिकायें हैं। इस लोक गाथा में चांदो सौदागार नामक व्यापारी की शिव के प्रति निष्ठा की कथा है। विषहरी नामक नाग देवी उसे इस कारण से अपने कोप का शिकार बनाती है क्योंकि वह किसी दूसरे देवता की पूजा नहीं करता है। विषहरी के कोप से उसे उसकी छोटी पुत्रवधू उबारती है, जिसका नाम बिहुला है। वह न सिर्फ अपने ससुर का धन–धान्य वापस कराती है, बल्कि अपने पति व उसके छह भाइयों के प्राण को भी वापस ले आती है। यह पूजा आज भी अंग क्षेत्र भागलपुर व आसपास के क्षेत्र में प्रचलित है। हर साल 17 अगस्त को यह धूमधाम से मनाया जाता है। चंपानगर में इसका भव्य मंदिर है। इस उत्सव में माली, धोबी और डोम आदि जातियों के लोगों की महत्वपूर्ण भूमिका है। इसी परंपरा के तहत धोबी परिवार मंदिर में हर वर्ष पूजा में छाता और पंखा चढ़ाते हैं।

भरथरी बाबा की स्मृति में हर साल लगता है मेला

मसलन, एक मेला भरथरी बाबा की स्मृति में हर साल लगता है। मेरे अपने गांव बल्लीकित्ता जो कि भागलपुर प्रमंडल के बांका जिले में आता है, तब अनेक टोलों में बंटा था– धोबी टोला, दुसाध टोली, कापरी टोला, मांझी टोला आदि। हमारे खेत पासवान टोली के सामने पड़ते थे और उन खेतों में 14 अप्रैल को भरथरी मेला शुरू होता था। इस दौरान कई तरह के सांस्कृतिक आयोजन होते थे। इनमें आल्हा–उदल, कमरथुआ बानी आदि गाए जाते थे, जिसमें मेरे दादा भी हिस्सा लेते थे। इस मेले में भरथरी बाबा की पूजा होती थी। पहले इस लोक देवता को मूलतः पासवान लोग ही पूजते थे। इसी तरह हर एक टोले में अपने–अपने देवता होते थे और

उनकी गीतात्मक गाथा होती थी और उन्हें पूजने की जिम्मेवारी उस जाति के एक परिवार को दी जाती थी। भरथरी मेला में सारा गांव शामिल होता था, लेकिन भूमिहार जाति के देवता के मंदिर में दलित जातियों के लोगों को पूजा की मनाही थी। वे सिर्फ मंदिर के प्रांगण में झाड़ू लगाकर सेवा दे सकते थे। अब कुछ वर्जनाएं टूटी हैं और इस स्थानीय मेले का इंतजार सभी को रहता है।

यादवों के लोकनायक विसु राउत

दक्षिण बिहार में बख्तौर बाबा के जैसे ही उत्तर–पूर्वी बिहार में विसु राउत यादव जाति के लोगों में लोक नायक के रूप में स्थापित हैं। आज भी प्रतिवर्ष शुक्ल प्रतिपदा को उनके कर्म क्षेत्र पचरासी (मधेपुरा) में मेला लगता है और वहां एक भव्य मंदिर बनाया गया है। इस दिन का पर्व सिरूआ बिसुआ कहलाता है। पचरासी में लोग दूर–दूर से दूध चढ़ाने आते है।

हिरनी–बिरनी की गाथा

यह दो बहनों की गाथा है, जो नट जाति से संबंधित है। ये दोनों बहनें एक विवाहित युवक पोसन सिंह पर आसक्त थीं। गाथा के मुताबिक तंत्र–मंत्र से लड़ते हुए युवक दोनों बहनों को अपनी दासी बना लेता है।

मानस राम–छेहनमल की गाथा

यह दो नायकों मानस राम (चमार) और छेछनमल (डोम जाति) की गाथा है। मानस राम मोरंग (नेपाल का जिला) और छेछनमल सीरी राज का सिपाही था। दोनां राज्यों में युद्ध की स्थिति में इन दोनों के शौर्य प्रदर्शन और वीरता की गाथा ही मानसराम–छेछनमल की लोकगाथा है।

लोरिकायन

इसे यादव जाति के लोग गाते हैं। इसका नायक लोरिक इसी जाति से था। वीर रस की इस गाथा में लोरिक की जीवन कथा और उसके युद्ध कौशल के बारे में जानकारियां हैं। यह मधेपुरा–सहरसा क्षेत्र में अधिक लोकप्रिय है।

राजा सलेहस

यह गाथा दुसाध (पासवान) जाति के नायक 'राजा सलहेस' की गाथा है, जिसके उपर 'लौंगा' नामक मालिन (माली समाज की महिला) आसक्त हो जाती है। इतिहासकारों ने इसे शंभूगंज क्षेत्र का माना है, वहीं कुछ इतिहासकार इसे खगड़िया क्षेत्र से जोड़कर देखते हैं।

मुसहर जाति के लोकनायक दीना–भदरी

लोक गाथा के मुताबिक, ये दोनों सहोदर भाई थे, जो मुसहर जाति से संबंध रखते थे। यह भी वीर और करूणा रस की मिलीजुली कथा है, जिसमें शरीर त्यागने के बाद दोनों अपने उपर किए गये अत्याचारों का बदला सामंतों से लेते हैं। यह सहरसा क्षेत्र की लोक गाथा मानी जाती है। गांवों में इनकी स्मृति में पिंडी का निर्माण किया जाता था। हालांकि अब मूर्तियों का चलन भी हो गया है, जो कि हिंदू धर्म के मिथकों से प्रभावित है।

खरवारों के नायक कुंवर विजयमल

यह लोकगाथा जनजातीय राजा के वीरता की गाथा है, जिसे ऐतिहासिक प्रमाणों के आधार पर खरवार नामक जनजाति का नायक माना गया है। यह 16–17वीं सदी की कथा मानी जाती है।

लुकेसरी देवी की गाथा

इस लोकगाथा में लुकेसरी नामक कन्या की प्रणय कथा है। यह कन्या मोची (चर्मकार) जाति से संबंध रखती है। लुकेसरी अपने प्रेमी योगी को पाने के लिए कठिन तपस्या करती है और योगी उसे देवी के रूप में अपना लेता है। लुकेसरी लोकदेवी के रूप में स्थापित हो जाती है।

रेशमा–चौहरमल की प्रेमगाथा

यह कथा एक प्रेम गाथा है, जो राजा सलहेस नामक लोक गाथा के समकालीन माना जाता है। यह कथा बिहार के मोकामा क्षेत्र के आसपास प्रचलित है। चाराडीह नामक स्थान में आज भी मेला लगता है। गाथा के मुताबिक रेशमा भूमिहार जाति और चौहरमल पासवान जाति से थे। यह गाथा दरअसल प्रेम गाथा तो है ही, साथ ही दो समाजों के बीच की अंतर्गाथा भी।

राजा हरिचन की गाथा

यह लोक गाथा राजा हरिचन को निष्ठा से पथभ्रष्ट करने की कथा है, जिसमें विश्वामित्र नामक योगी असफल रहते है और राजा हरिचन की निष्ठा जीतती है। यह गाथा नट जाति के लोगों द्वारा गायी जाती है।

कारिख पांजियार

यह लोक गाथा यादव जाति से संबंध रखती है, लेकिन बनिया, पासवान जातियों के बीच भी यह समान रूप से लोकप्रिय है। यह लोक गाथा जनसाधारण के जीवन का प्रतिबिंब है, जिसमें जीवन के सुख–दुख, जीत–हार, साहस व विश्वास की कथा है।

बहरहाल, उत्तर–पूर्व बिहार के दलित–बहुजनों के बीच और अनेक लोकगाथाएं हैं, जिनका दस्तावेजीकरण नहीं होने के कारण विलुप्ति होते जा रहे हैं। इनमें मन्नू हरिया डोम, छेछन डोम, महुआ घटवारिन, कैलादास आदि शामिल हैं। इन सभी का संबंध बहुजन समुदायों से है। इनमें कई गाथाएं बिहार के अलग–अलग हिस्सों में अलग–अलग नाम से भी प्रसिद्ध हैं।

(साभार: www.forwardpress.in)

मनोरंजन प्रसाद सिंह

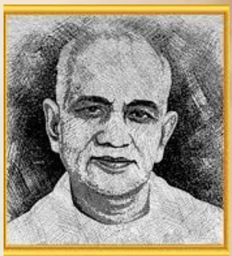

भोजपुर में आम तौर पर गाई जाने वाली लोकगाथाओं में वीर स्वतंत्रता सेनानी कुंवर सिंह की वीरता के किस्से सर्वाधिक प्रचलित हैं। भोजपुरी में लिखित श्री मनोरंजन प्रसाद सिन्हा की 'वीर कुंवर सिंह' उन गाथाओं में शामिल हैं, जिन्हें आज भी पूरे जोश और आत्मीयता के साथ गाया जाता है। 10 अक्टूबर, 1900 ईस्वी को सूर्यपुरा शाहाबाद में जन्मे श्री मनोरंजन प्रसाद सिन्हा एक कवि, लेखक तथा राजेन्द्र कॉलेज छपरा के प्रोफेसर एवं प्राचार्य थे। जब यह कविता 1929 में रामवृक्ष बेनीपुरी के संपादन में निकलने वाली 'युवक' में छपी, तो ब्रिटिश सरकार ने इसे तत्काल प्रतिबंधित कर दिया। इस कविता का 1930 में प्रकाशित सुभद्रा कुमारी चौहान की ''झाँसी की रानी'' कविता से बहुत सीमा तक साम्य है। कवि श्री मनोरंजन प्रसाद सिन्हा की लिखी एक अन्य कविता ''फिरंगिया'' न केवल भारत में बल्कि भोजपुरी भाषी सभी देशों में अत्यंत लोकप्रिय है।

सब कहते हैं कुंवर सिंह भी बड़ा वीर मर्दाना था...

मस्ती की थी छिड़ी रागिनी, आजादी का गाना था।
भारत के कोने–कोने में, होगा यह बताया था।
उधर खड़ी थी लक्ष्मीबाई, और पेशवा नाना था।
इधर बिहारी वीर बाँकुरा, खड़ा हुआ मस्ताना था।
अस्सी वर्षों की हड्डी में जागा जोश पुराना था।
सब कहते हैं कुंवर सिंह भी बड़ा वीर मर्दाना था।।

नस–नस में उज्जैन वंश का बहता रक्त पुराना था।
भोजराज का वंशज था, उसका भी राजघराना था।
बालपने से ही शिकार में उसका विकट निशाना था।
गोला–गोली, तेग–कटारी यही वीर का बना था।
उसी नींव पर युद्ध बुढ़ापे में भी उसने ठाना था।
सब कहते हैं कुंवर सिंह भी बड़ा वीर मर्दाना था।।

रामानुज जग जान, लखन ज्यों उनके सदा सहायी थे।
गोकुल में बलदाऊ के प्रिय जैसे कुंवर कन्हाई थे।
वीर श्रेष्ठ आल्हा के प्यारे ऊदल ज्यों सुखदायी थे।
अमर सिंह भी कुंवर सिंह के वैसे ही प्रिय भाई थे।
कुंवर सिंह का छोटा भाई वैसा ही मस्ताना था।
सब कहते हैं कुंवर सिंह भी बड़ा वीर मर्दाना था।।

देश–देश में व्याप्त चहुँ दिशि उसकी सुयश कहानी थी।
उसके दया–धर्म की गाथा सबको याद जबानी थी।
रूबेला था बदन और उसकी चौड़ी पेशानी थी।
जग–जाहिर जगदीशपुर में उसकी प्रिय रजधानी थी।
वहीं कचहरी थी ऑफिस था, वहीं कुंवर का थाना था।

भोजपुरी गाथा

सब कहते हैं कुंवर सिंह भी बड़ा वीर मर्दाना था।।

बचपन बीता खेल–कूद में और जवानी उद्यम में।
धीरे–धीरे कुंवर सिंह भी आ पहुँचे चौथेपन में।
उसी समय घटना कुछ ऐसी घटी देश के जीवन में।
फैल गया विद्वेष फिरंगी के प्रति सहसा सबके मन में।
खौल उठा सन् सत्तावन में सबका खून पुराना था।
सब कहते हैं कुंवर सिंह भी बड़ा वीर मर्दाना था।।

बंगाल के बैरकपुर ने आग द्रोह की सुलगाई।
लपटें उसकी उठी जोर से दिल्ली औ' मेरठ धाई।
काशी उठी लखनऊ जागा धूम ग्वालियर में छाई।
कानपुर में और प्रयाग में खड़े हो गए बलवा।
रणचंडी हुंकार कर उठी शत्रु हृदय थर्राना था।
सब कहते हैं कुंवर सिंह भी बड़ा वीर मर्दाना था।।

सुनकर के आह्वान, समर में कूद पड़ी लक्ष्मीबाई।
स्वतंत्रता की ध्वजा पेशवा ने बिठूर में फहराई।
खोई दिल्ली फिर कुछ दिन को वापस मुगलों ने पाई।
थर–थर करने लगे फिरंगी उनके सिर शामत आई।
काँप उठे अंग्रेज कहीं भी उनका नहीं ठिकाना था।
सब कहते हैं कुंवर सिंह भी बड़ा वीर मर्दाना था।।

आग क्रांति की धधक उठी, पहुँची पटने में चिनगारी।
रणोन्मत्त योद्धा भी करने लगे युद्ध की तैयारी।
चंद्रगुप्त के वंशज जागे करने माँ की रखवारी।
शेरशाह का खून लगा करने तेजी से रफ्तारी।
पीर अली फाँसी पर लटका, वीर बहादुर दाना था।
सब कहते हैं कुंवर सिंह भी बड़ा वीर मर्दाना था।।

पटने का अंग्रेज कमिश्नर टेलर जी में घबराया।
चिट्ठी भेज जमींदारों को उसने घर पर बुलवाया।
बुद्धि भ्रष्ट थी हुई और आँखों पर था परदा छाया।
कितनों ही को जेल दिया और फाँसी पर भी लटकाया।
कुंवर सिंह के नाम किया उसने जारी परवाना था।
सब कहते हैं कुंवर सिंह भी बड़ा वीर मर्दाना था।।

कुंवर सिंह ने सोचा जब उनके मुंशी की हुई तलाश।
दगाबाज अब हुए फिरंगी इनका जरा नहीं विश्वास।
उसी समय पहुँचे विद्रोही दानापुर से उनके पास।
हाथ जोड़कर बोले वे सरकार आपकी ही है आस
सिंहनाद कर उठा केसरी उसे समर में जाना था।
सब कहते हैं कुंवर सिंह भी बड़ा वीर मर्दाना था।।

गंगा तट पर अर्धरात्रि को हुई लड़ाई जोरों से।
रणोन्मत्त हो देसी सैनिक उलझ पड़े जब गोरों से।
शून्य दिशाएँ काँप उठी तब बंदूकों के शोरों से।
लेकिन टिके न गोरे भागे प्राण बचाकर चोरों से।
कुछ क्षण में अंग्रेज फौज का वहाँ न शेष निशाना था।
सब कहते हैं कुंवर सिंह भी बड़ा वीर मर्दाना था।।

आरा पर तब हुई चढ़ाई, हुआ कचहरी पर अधिकार।
फैल गया तब देश–देश में कुंवर सिंह का जय–जयकार।
लोप हो गई तब आरा से बिलकुल अंग्रेजी सरकार।
नहीं जरा भी होने पाया मगर किसी पर अत्याचार।
भाग छिपे अंग्रेज किले में, सब लुट चुका खजाना था।
सब कहते हैं कुंवर सिंह भी बड़ा वीर मर्दाना था।।

खबर मिली आरा की तो, आयर बक्सर से चढ़ धाया।
विकट तोपखाना था, सँग में फौजें था काफी लाया।
देशद्रोहियों का भी भारी दल था उसके संग आया।
कब तक टिकते कुंवर सिंह आरे से उखड़ गया पाया।
अपने ही जब बेगाने थे, उलटा हुआ जमाना था।
सब कहते हैं कुंवर सिंह भी बड़ा वीर मर्दाना था।।

हुआ युद्ध जगदीशपुर में मचा वहाँ पूरा घमासान।
अमर सिंह का तेज देखकर दुश्मन दल भी था हैरान।
महाराज डुमराव वहीं थे, ज्यों मुगलों में राजा मान।
अमर सिंह झपटा तेजी से लेकर उन पर नग्न कृपाण।
झपटा जैसे मानसिंह पर वह प्रताप सिंह राणा था।
सब कहते हैं कुंवर सिंह भी बड़ा वीर मर्दाना था।।

हौदे में थे महाराज, पड़ गई तेग की खाली वार।
नाक कट गई पीलवान की हाथी भाग चला बाजार।
अमर सिंह भी बीच सैन्य से निकल गया सबको ललकार।
दादाजी थे चले गए, फिर लड़ने की थी क्या दरकार।
पड़ा हुआ था शून्य महल, जगदीशपुर अब वीराना था।
सब कहते हैं कुंवर सिंह भी बड़ा वीर मर्दाना था।।

राजा कुंवर सिंह जा पहुंचे, अतरौलिया के मैदान
आ पहुँचे अंग्रेज उधर से, हुआ परस्पर युद्ध महान।
हटा वीर कुछ कौशलपूर्वक, झपट पड़ा फिर बाज समान।
भाग चले मिलमैन बहादुर बैल–शकट पर लेकर प्राण।
आकर छिपे किले के अंदर, उनको प्राण बचाना था।
सब कहते हैं कुंवर सिंह भी बड़ा वीर मर्दाना था।।

('वीर कुंवर सिंह' कविता का एक अंश)

भोजपुरी लोक कथा

खा खा खइया

एक पडित जी थे, नाम उनका था भोला। पढ़े–लिखे कुछ खास न थे, परन्तु पूरे क्षेत्र में उनकी पंडिताई का खूब रोब था। पूरे गांव की जजमानिका वह ही सम्हालते थे। दूसरे गांव का भूले भटके अगर कोई पंडित आ भी जाए तो उसकी बेइज्जती करके भगा देते थे। उनका साफ–साफ कहना था, ''अगर कोई बाहर का पंडित गांव में आता है तो मेरे साथ शास्त्रार्थ करें, उसके बाद पंडिताई का नाम ले।'' शास्त्रार्थ में वे ऐसी फजीहत करते कि बाहरी पंडित लजा के भाग जाता था। इस तरह वो पूरे गांव कि पंडिताई संभाले हुए थे, और खूब धन और यश कमा रहे थे।

रात में एक बार एक दूर गांव के पंडित जी भूले–भटके उस गांव में आ गए। वो तो रात भर गांव में शरण लेना चाहते थे। लेकिन गांव के लोग उनको भोला पंडित के पास ले गए। भोला पंडित ने शास्त्रार्थ करने के इरादे से सवाल किया, "खा खा खइया"? बेचारे उन बाहरी पंडित जी को कुछ समझ नहीं आया और बगले झाँकने लगे। भोला पंडित जी ने उनका पोथी पत्रा छीन कर आधी रात को गांव के बाहर भगा दिया।

जब थके–मांदे पंडित भोर में अपने गांव पहुंचे तो उनका यह हाल देख कर उनका छोटा भाई आग बबूला हो गया और भोला पंडित से बदला लेने की ठान ली। बड़े भाई के लाख रोकने पर भी वो नहीं माना और भोला पंडित के गांव की ओर चल पड़ा।

गांव में घुसते ही लोग उनको भोला पंडित के घर ले गए। भोला पंडित ने अपनी आदत के अनुसार उससे सवाल किया, ''खा खा खइया?'' सवाल सुनते ही वो पंडित आग–बबूला हो गया और भोला पंडित से बोला "अरे मूर्ख पंडित, अन्धों में काना राजा बना हुआ है? कम से कम सिलसिलेवार सवाल पूछो। खा खा खइया के पहले क्या होता है, पता है तुम्हें? नहीं! तो सुनो...

पहिले होला जोत जोतइया
तब फेरु होला हेंग हेंगईया
तब फेरु जाके बोव बोवइया
होला जब तब कूट कुटइया
कुटी पिसीके रिन्ह रिनहैया
तब न जाके के खा खा खइया!!''

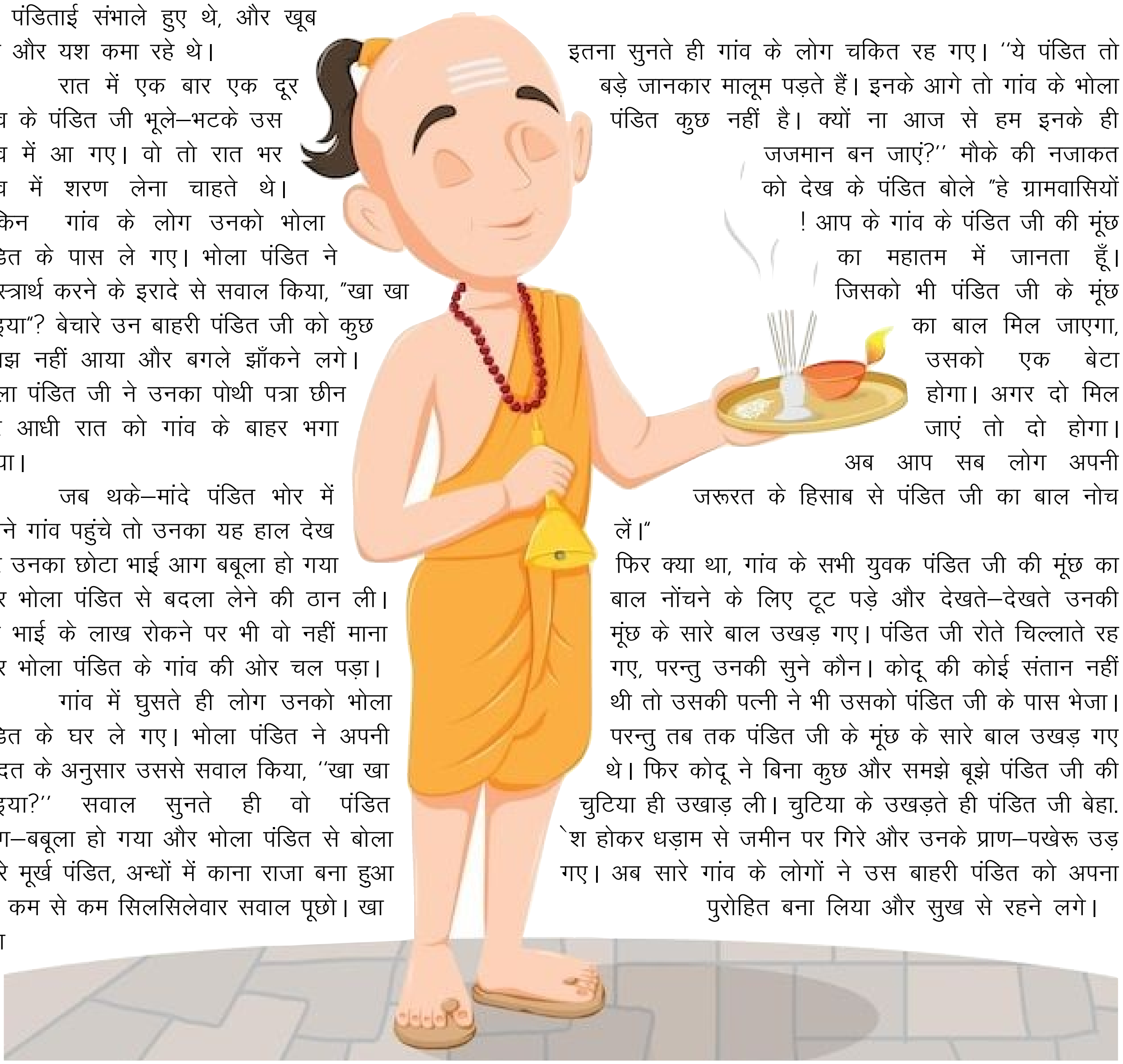

इतना सुनते ही गांव के लोग चकित रह गए। ''ये पंडित तो बड़े जानकार मालूम पड़ते हैं। इनके आगे तो गांव के भोला पंडित कुछ नहीं है। क्यों ना आज से हम इनके ही जजमान बन जाएं?'' मौके की नजाकत को देख के पंडित बोले "हे ग्रामवासियों ! आप के गांव के पंडित जी की मूंछ का महातम में जानता हूँ। जिसको भी पंडित जी के मूंछ का बाल मिल जाएगा, उसको एक बेटा होगा। अगर दो मिल जाएं तो दो होगा। अब आप सब लोग अपनी जरूरत के हिसाब से पंडित जी का बाल नोच लें।"

फिर क्या था, गांव के सभी युवक पंडित जी की मूंछ का बाल नोंचने के लिए टूट पड़े और देखते–देखते उनकी मूंछ के सारे बाल उखड़ गए। पंडित जी रोते चिल्लाते रह गए, परन्तु उनकी सुने कौन। कोदू की कोई संतान नहीं थी तो उसकी पत्नी ने भी उसको पंडित जी के पास भेजा। परन्तु तब तक पंडित जी के मूंछ के सारे बाल उखड़ गए थे। फिर कोदू ने बिना कुछ और समझे बूझे पंडित जी की चुटिया ही उखाड़ ली। चुटिया के उखड़ते ही पंडित जी बेहा. `श होकर धड़ाम से जमीन पर गिरे और उनके प्राण–पखेरू उड़ गए। अब सारे गांव के लोगों ने उस बाहरी पंडित को अपना पुरोहित बना लिया और सुख से रहने लगे।

मंतव्य

लोकगाथा का सामाजिक–सांस्कृतिक सन्दर्भ

मैथिली लोकगाथाओं के विशेष सन्दर्भ में

कमलानंद झा

जनसमूह के व्यापक अनुभव और उनकी आकांक्षाओं की लंबी तथा क्रमिक कथात्मक अभिव्यक्ति ही लोकगाथा है। समाज में जब निम्न वर्णों को शास्त्रीय और नागरिक साहित्य, संगीत और कला के माध्यमों से सायास अलग रखने की चेष्टा की गई होगी तब उन्होंने अपने लिए इतिहास, मिथ, यथार्थ, कल्पना आदि के समिश्रण से लोकगाथाओं का सृजन किया होगा। अधिकांश लोकगाथाओं को गानेवाले, अभिनीति करनेवाले और देखनेवालों की पृष्ठभूमि की जब पड़ताल की जाती है तो उक्त स्थापनाएँ सही प्रतीत होती हैं। सामान्यतया देखा गया है कि निम्न जाति और दलित वर्ग ही इन लोकगाथाओं में विशेष आनंद लेते हैं। अपवादस्वरूप कुछ अभिजात वर्ग भी इसमें आनंद लेते हैं, लेकिन 'आउटसाइडर' की तरह। मैथिली भाषा–भाषी क्षेत्र में उत्सव विशेष पर जब कई–कई रातों तक धारावाहिक लोकगाथाएँ मंचित होती होती रहती हैं तब दलित जनसमूह उन लोकगाथाओं को देखता कम, जीता और भोगता अधिक है। उनका यह 'इंवोल्वमेंट' इस तथ्य का परिचायक है कि ये लोकगाथाएँ सिर्फ मिथ और कल्पनाएँ नहीं हैं बल्कि इसमें इतिहास और यथार्थ के अंश भी हैं। कोई साजिशपूर्ण षडयंत्र लंबे समय से चला आ रहा है जो दलित शौर्य और सौन्दर्य से भरे इन लोकगाथाओं को मिथ और काल्पनिक सिद्ध करने पर आमदा है।

लोकगाथाओं में दलित शौर्य और सौन्दर्य

कहने की आवश्यकता नहीं कि अधिकांश लोकगाथाओं के नायकों की पारिवारिक पृष्ठभूमि निम्न जाति और दलित वर्ग की है। इन नायकों का शौर्य और पराक्रम ही नहीं बल्कि गुण और सदाशयता भी किसी शास्त्रीय और उच्च कुल, गोत्र, मूल के नायकों से कमतर नहीं है। दरअसल समाज में उनकी हीन और दयनीय स्थिति के प्रतिक्रियास्वरुप अपनी जाति में नायकों का सृजन उनके लिए

जीवन–मरण का सवाल था। दूसरी तरफ इस तथ्य से भी इनकार नहीं किया जा सकता है कि चूँकि व्यवहार में उस समय पराक्रम दिखाना उनके लिए दिवास्वप्न था, फलस्वरूप उन्होंने ऐसे लोक नायकों की श्रृष्टि की जिनमें अपार साहस, शौर्य और पराक्रम था। इतना ही नहीं सार्वजनिक मंदिरों पर इनके लिए लगी 'प्रवेश निषेध' की तख्तियों ने इन लोक नायकों को लोक देवता के रूप में पूजने के लिए प्रेरित किया होगा।

बिहार में प्रचलित कुछ लोकगाथाओं की ओर अगर हम ध्यान दें तो इस तथ्य से हमारा सहज साक्षात्कार हो जाता है। सलहेस और कालीदास लोकगाथा का नायक जहाँ 'दुसाध' जाति का है वहीं दुलरादयाल का नायक 'मलाह' जाति का, दीनाभद्री में 'मुसहर', छेछ्नगाथा में 'डोम', लाल महाराज और लुकेसरी देवी में ''चमार, गरीब दयाल सिंह में 'नटुआ' और लोरिकगाथा में 'गोप 'समाज के नायकों का अद्भुत शौर्य और सौन्दर्य को देकने को मिलता है।

इन निम्न जातियों के नायकत्व में रची रचनाओं को भला साहित्य का दर्जा क्योंकर मिलता? 'पवित्र' शिष्ट काव्य को दूषित–प्रदूषित होने का खतरा जो था! इसलिए शिष्ट साहित्य में इन लोकगाथाओं की अनुगूँज न के बराबर है। हिन्दी साहित्य में भी नहीं और अन्य क्षेत्रीय भाषा के साहित्य में नहीं। लोकगाथाओं में निम्नजाति के शौर्य और सौन्दर्य को उदाहरणस्वरूप यहाँ एक मैथिली लोकगाथा 'लोरिकाइन' (यह लोकगाथा अन्य भाषाओं में भी खूब लोकप्रिय है) के माध्यम से समझने की चेष्टा की जायेगी। लोरिकाइन का नायक लोरिक हल चलानेवाला और गाय चरानेवाली का पुत्र है। मृच्छकटिक के अतिरिक्त सम्पूर्ण संस्कृत साहित्य और आदिकालीन हिन्दी साहित्य में कदाचित ऐसा कोई नायक नहीं जो अवतार, राजा या राजकुमार नहीं है। लोरिक न तो किसी राजा या सामंत का आश्रित है और ना ही सिद्ध महात्मा अथवा चमत्कारी। अपनी सारी दुर्बलता और सबलता के साथ दुःख–सुख का एहसास करता एक अत्यंत साधारण मनुष्य किन्तु असाधारण योद्धा है। शायद ही ऐसा कोई महाकाव्य हो जिसका नायक इतना साधारण मनुष्य हो।

लोरिकाइन दो सामंतों या दो राजाओं के बीच की युद्ध–गाथा नहीं है। यह सामंतों के अत्याचार और उससे पीड़ित लोगों की व्यथा के विरुद्ध एक साधारण लोक नायक की युद्ध–गाथा है। यही चेतना लोरिकाइन को आधुनिक और विशिष्ट बनाती है। इस गाथा में नायक लोरिक ने जितने भी युद्ध किये हैं वे सभी सामंत, व्यभिचारी, मद्यपी, लोकउत्पीड़क और खल स्वभाव के हैं।

वीर लोरिक का भोजपुरी रूप

भोजपुरी लोक गाथानुसार वीर लोरिक का जन्म एक गरीब बुढ़कूबे के घर होता है। गउरा में आनंद छा जाता है। गढ़ गउरा का राजा शाहदेव दुराचारी व्यक्ति था। उसके अत्याचार से समस्त प्रजा त्राहि कर रही थी। ऐसी परिस्थितियों में लोरिक का जन्म होता है। बाल्यावस्था से ही वह सब विद्याओं में पारंगत हो जाता है। बोहा में वह गाय, भैंसों से खेलता है। अखाड़े में अपने बड़े भाई संवरू तथा गुरू मितारजईल को भी पछाड़ देता है। अपने कृत्यों से पुरजनों को प्रसन्न करता है। बड़े भाई संवरू के विवाह में संकट देखकर पिता को ढाँढस बंधाता है और कहता है बाबा घबराने की कोई बात नहीं।

अरे पहिला अवतरवा हो भईल मोहबा में हमार
नइया रहे बाबिल उदल हो हमार
नैनागढ़ में कइले हो रहली आल्हा के बियाह
अरे तेकर त हलिया जाने सब–सब ये सार
दूसर अवतरवा हो भईल गढ़ रोही के दास
नामवा तो रहिले बाबिल बिजई कुँअर हमार
बावनगढ़ किलवा बाबिल दिल्ली हो गिराय
अरे तिसरे जनमवाए बाबिल गउरवा में भईल हमार
तोहरा ही धरवा नइयाँ लोरिकवा पड़त हमार
तू त बाबिल जाल थोड़े में घबड़ाय
हमरो त हलिया बाबिल देख आँख पसार

उक्त वचन सुनकर पिता को विश्वास हो जाता है और संवरू के विवाह की अनुमति देता है। वह सब प्रकार से सुसज्जित होकर बारात में चल देता है तथा जीवन के रणक्षेत्र में कूद पड़ता है। लोरिक के जीवन का व्रत लोकरंजन एवं लोकसेवा होता है। उसे भली भाँति मालूम रहता है कि बिना दुष्टों के नाश किये देश में शांति स्थापित नहीं हो सकती। वह अपने बड़े भाई के विवाह के बहाने दुष्टों का नाश करता है। उसने सुरबलि के राजा वामदेव के अत्याचार को सुन रखा था। वह प्रतिज्ञा करता है, ''वामदेव के किलवा में कोइला देबि बोवाय'' और सुरबलि पहुँच कर राजा वामद. `व से भीषण युद्ध होता है। वह अद्भुत पराक्रम से युद्ध करता है। जादू टोना, भूत–प्रेत इत्यादि उसका बाल भी बाँका नहीं कर पाती। स्वर्ग के देवतागण मानो उसकी सहायता करते हैं। वह भाई का ब्याह रचाता है और विवाह के उपरांत सुरबलि को तहस–नहस कर ही दम लेता है।

(डॉ. सत्यव्रत सिन्हा–भोजपुरी लोक गाथा–पृष्ठ 94–96)

मंतव्य

लोरिक का युद्ध न तो किसी सुन्दरी के लिए था और न ही सीमा–विस्तार के लिए। ध्यान देने की बात है कि पूर्व के सभी शिष्ट साहित्य (संस्कृत, हिन्दी और मैथिली) के नायकों के युद्धों में शौर्य और अपराध में कोई विशेष अंतर न था। क्योंकि सामंती मानसिकता के अनुसार साधारण व्यक्ति द्वारा अपहरण और हत्या जहाँ अपराध की कोटि में था वहीं राजा के लिए यह कार्य शौर्य माना जाता था। लोरिकाइन के नायक लोरिक ने कितनी ही पीड़ित स्त्रियों को सामंतों के चंगुल से मुक्त किया, किन्तु अपने व्यवहार में लाने का यहाँ सवाल ही नहीं था।

लोरिक की अंतिम इच्छा थी 'रण–संग्राम' में विजयी होना और वीर–गति को प्राप्त करना। 'रण–संग्राम' शब्द यहाँ गंभीर ऐतिहासिक अर्थ रखता है। लोकगाथा से सुप्रसिद्ध विद्वान ब्रजकिशोर वर्मा मणिपद्म के अनुसार, "कई गाँवों के लोगों द्वारा सामूहिक रूप से किसी अनाचार या आक्रमण का मुकाबला रण–संग्राम' कहलाता था। कई गाँवों के लोग एक उद्देश्य से साझे काम के लिए बगैर सेना के जो युद्ध करते हैं, वह है रण–संग्राम। धीरे–धीरे 'रण' शब्द हट गया और संग्राम शब्द सभी तरह के युद्ध के लिए रूढ़ हो गया।" लोरिक इसी अर्थ में लोक नायक था क्योंकि उसने जितने भी युद्ध लड़े बगैर सेना के अपने कुछ ग्रामीण साथियों के साथ। फलस्वरूप इस विजेता वीर को प्रचुर जनसहानुभूति, जनसहयोग और जन–उत्साह मिला होगा और वह ग्रामीणों के मुक्तिदाता के रूप में पूजा जाता रहा होगा।

लोरिकाइन लोकगाथा बुन्देलखण्ड से लेकर बंगाल तक कई भाषाओं के लोककंठ में रची–बसी है। मैथिली लोरिकाइन में लोरिक का शौर्य देखते ही बनता है–

निशि राति मे राजा हरवा/उठलई रे चाहाय
मार–मार के मारू डंका/देलकई रे बजबाय
एरही बाजा बाजई रे/तुरही घमासान
भोर होइत जे करत ई ककरौ/नगरी के समसान
हिन–हिन–हिन–हिन घोड़ा हिन कई/हाथी करई चिंघाड़
अकुना–मकुना कै लरियाबै/सोलह सौ दंतार

लोरिकाइन की एक खास विशेषता यह है कि यहाँ शौर्य केवल पुरुषो में ही नहीं है बल्कि स्त्रियाँ भी शौर्य और पराक्रम के भरी हुई हैं। शिष्ट साहित्य की तरह यहाँ की स्त्रियाँ सिर्फ सजावट की वस्तु नहीं हैं। लोरिकाइन की सभी स्त्री पात्रों यथा चनैन, सुनैना, मांजरि का अपना स्वतंत्र अस्तित्व है। नायक लोरिक तो साक्षर भी नहीं है किन्तु राजकुमारी चनैन पढ़ी–लिखी और राजकाज के दाव–पेंच में पूरी दक्ष है। नायिका मांजरि एक बार बलात्कारी सामंत पर क्रोधित होकर रणचंडी का रूप धारण कर लेती है–

रोइयाँ किन को भगन ने हेतनि/भगवतीक प्रतापसँ
शत्रु समन हेतई मेदनी पर/नारी सत्तक दापसँ
जइ खंडा के कहनो पट्टा/नईं सकइ टसकाइ
तइ खंडा के कोआया सुन्नरि/फूल बूझि लेलनि उठाय

लोरिकाइन मूलतः वीर–काव्य है इसका सौन्दर्य पक्ष भी कम महत्वपूर्ण नहीं है। गाथा में सौन्दर्य सृष्टि हेतु नायक लोरिक को महा पराक्रमी योद्धा के साथ–साथ श्रेष्ठ नर्तक भी बनाया जाता है। योद्धा और नर्तक का अद्भुत सामंजस्य लोरिक में देखते ही बनता है। लोकगाथाओं के काव्य–सौन्दर्य पर विद्वानों की नजर कम गई है। यहाँ नायिका मांजरि का सौन्दर्य वर्णन कितना मानवीय है–

बिजुरि रेह सन पातर–छीतरि/सिनुर बोरल सन गाल रे
से सिन्नुर काजर पर पसरल/नील नयन किछु लाल रे।
सुगबा नाक पान पर हुलसल/ठोर से पातर पान रे
झम्मर–झम्मर चलई धनी/उगला सुरुज मलान रे

गाथा में लोरिक और राजकुमारी चनैन का रोमांस– प्रसंग इसके सौन्दर्य पक्ष को कई गुना बढ़ा देता है, "लोरिक सिंह की तरह चल रहे हैं जब कि चनैन हथिनी की चाल चल रही है, लो. रिक दंतार हाथी के समान झूम रहे हैं तो चनैन मयूर की तरह 'फहरा' रही है। लोरिक के खंडा (कटरा) से बिजली की चमक पैदा हो रही है तो चनैन की बिंदी से किरण की आभा फूट रही है। लोरिक की आँख से मद झर रहा है तो चनैन की आँखों से मधु।'' शिष्ट साहित्य (श्रृंगार साहित्य) से विपरीत यहाँ हम देख सकते हैं कि किस तरह अश्लील हुए बगैर सम्भोग पूर्व प्रेम, रोमांस का कितना सघन वर्णन हुआ है।

(deshajman.blogspot.com में प्रकाशित आलेख का एक अंश)

मैथिली लोक गाथा

उगना रे मोर कतए गेलाह...

महाकवि विद्यापति हिंदी साहित्य की भक्ति परंपरा के प्रमुख कवियों में से एक हैं, जिन्हें मैथिली के सर्वोपरि कवि के रूप में जाना जाता हैं। वे भगवान शिव के बहुत बड़े भक्त हुआ करते थे। उन्होंने भगवान शिव पर अनेकानेक गीतों की रचना की है। मान्यताओं के अनुसार, जगतव्यापी भगवान शिव विद्यापति की भक्ति व रचनाओं से बेहद प्रसन्न होकर स्वयं एक दिन वेश बदलकर उनके पास चले आए थे। उनके साथ रहने के लिए भगवान शिव विद्यापति के घर नौकर तक बनने के लिए तैयार थे। उन्होंने अपना नाम उगना बताया था। दरअसल कवि विद्यापति आर्थिक रूप से सबल नहीं थे, इसलिए उन्होंने उगना यानि भगवान शिव को नौकरी पर रखने से पहले मना कर दिया। मगर फिर शिवजी के कहने पर ही सिर्फ दो वक्त के भोजन पर उन्हें रखने के लिए विद्यापति तैयार हो गए थे।

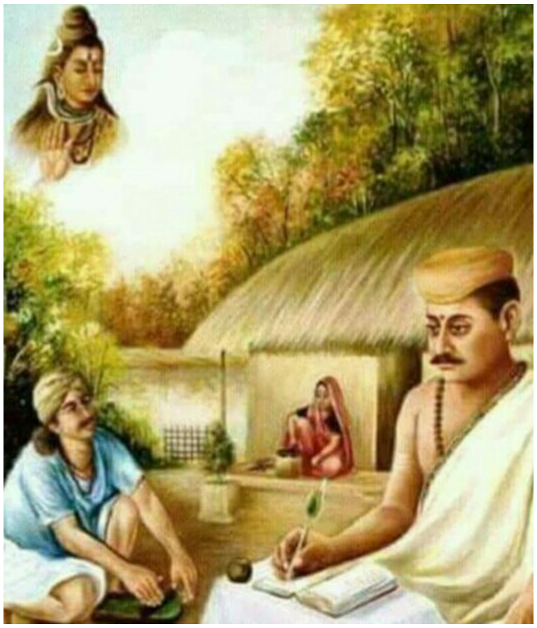

ऐसी कथा है कि जब एक दिन विद्यापति राजा के दरबार में जा रहे थे, तो तेज गर्मी व धूप से विद्यापति का गला सूखने लगा, मगर आस–पास जल नहीं था। इस पर साथ चल रहे विद्यापति ने उगना (शिवजी) से जल लाने के लिए कहा। तब शिवजी ने थोड़ी दूर जाकर अपनी जटा खोली व एक लोटा गंगाजल ले आए। जल पीते ही विद्यापति को गंगाजल का स्वाद आया, उन्होंने सोचा कि इस वन के बीच यह जल कहां से आया। इसके बाद उन्हें संदेह हुआ कि कहीं उगना स्वयं भगवान शिव ही तो नहीं हैं। उन्होंने शिवजी के चरण पकड़ लिए तो शिवजी को अपने वास्तविक स्वरूप में आना पड़ा। इसके बाद शिवजी ने महाकवि विद्यापति के साथ रहने की इच्छा जताई और उन्हें बताया कि वह उगना बनकर ही साथ रहेंगे। उनके वास्तविक रूप का किसी को पता नहीं चलना चाहिए।

इस पर विद्यापति ने भगवान शिव की सारी बातें मान लीं, लेकिन एक दिन उगना द्वारा किसी गलती पर कवि की पत्नी शिवजी को चूल्हे की जलती लकड़ी से पीटने लग गई। उसी समय विद्यापति वहां आ गए और उनके मुख से निकल गया कि यह तो साक्षात भगवान शिव हैं, और तुम इन्हें मार रही हो। मगर विद्यापति के मुख से जैसे ही यह बात निकली तो भगवान शिव अंतर्ध्यान हो गए। इसके बाद अपनी भूल पर पछताते हुए कवि विद्यापति वनों में शिवजी को खोजने लगे। अपने प्रिय भक्त की ऐसी दशा देखकर भगवान उनके समक्ष प्रकट हुए और उन्हें समझाया कि मैं अब तुम्हारे साथ नहीं रह सकता। परंतु उगना के रूप में जो तुम्हारे साथ रहा उसके प्रतीक चिह्न के रूप में अब मैं शिवलिंग के रूप में तुम्हारे पास विराजमान रहूंगा। उसके बाद से ही उस स्थान पर स्वयंभू शिव. लिंग प्रकट हो गया।

उगना महादेव मंदिर के गर्भगृह में जाने के लिए आपको छह सीढ़ियां उतरकर जाना पड़ता हैं। इसी प्रकार उज्जैन में स्थित महाक. ाल मंदिर में भी शिवलिंग तक पहुंचने के लिए छह सीढ़ियां उतरनी पड़ती हैं। उगना महादेव मंदिर का शिवलिंग तल से पांच फुट नीचे है। यहां माघ कृष्ण पक्ष में मनाया जाता नर्क निवारण चतुर्दशी पर्व काफी धूमधाम से मनता है। बताया जाता है कि 1934 के भूकंप में मंदिर को कोई भी नुकसान नहीं आया था।

बताया जाता है कि जब शिवजी अंतर्ध्यान हो गए थे, तब उन्हें जंगलों में खोजते–खोजते विद्यापति अपनी सुध–बुध खो बैठे थे। उस समय उन्होंने जिस गीत की रचना की, वह आज भी अत्यंत लोकप्रिय है...

उगना रे मोर कतए गेलाह,
कतए गेला शिव कीदहू भेलाह।
भांग नहि बटुआ रुइस बैसलाह,
जोहि हेरि आनि देल हँस उठलाह।
जे मोर उगनाक कहत उदेस,
ताहि देब ओकर कँगन संदेश।
नन्दन वन बीच भेटल महेस,
गौरी मन हरखित भेटल कलेस।
विद्यापति मन उगना सो काज,
नहि हितकर मोर तिहुवन राज।

लोक धर्म के सबसे प्रखर प्रतीक

बरहम बाबा या डीहवार बाबा

बिहार के गांवों और कस्बों में स्थानीय देवी–देवता होते हैं जिन्हें लोक देवी–देवता भी कहते हैं। इन देवी–देवताओं में स्थानीय लोगों की अटूट आस्था होती है। गांव के लोग कोई भी अच्छा काम करने से पहले इन देवताओं की अनुमति और आशीर्वाद लेना जरूरी मानते हैं। इन्हीं देवताओं में से एक बरहम बाबा या डीहवार बाबा उत्तरी बिहार के लोक धर्म के सर्वाधिक प्रखर प्रतीक हैं। इनका स्थान गांव के सार्वजनिक धार्मिक क्रियाकलापों का केंद्र होता है। नियमानुसार पीपल के पेड़ के रूप में गाँव के बाहर पश्चिम में बरहम स्थान होना चाहिए, लेकिन गांव के विस्तार होने पर एक से अधिक बरहमस्थान अलग–अलग दिशाओं में बन जाते हैं।

बरहम को गांव का मुख्य संरक्षक माना जाता है। बरहम के बारे में यह भी माना जाता है कि ये गांव के आसपास भटकने वाली आत्माओं, भूत–पिशाचों को अपने नियंत्रण में रखते हैं। दूसरी संस्थाओं की तरह इनका भी ब्राह्मणीकरण हुआ है। वर्तमान में माना जाता है कि यदि कोई ब्राह्मण बालक यज्ञोपवित के बाद और विवाह से पहले किसी दुर्घटना के कारण मर जाता है तो वही गांव का बरहम बन जाता है। लेकिन इसकी मूल अवधारणा अवैदिक और जनजातीय लगती है। ग्राम–स्थापना और वास्तु पूजा के जनजातीय कर्मकांडों में इसके सूत्र खोजे जा सकते हैं। इसलिए यहां संस्कृत शब्द निराकार ब्रह्म के बजाए बरहम शब्द का उपयोग किया जा रहा है, जो आम लोग बोलते हैं। बरहम बाबा को लोग मिट्टी के बने घोड़कलश, धोती, जनेऊ, मिठाई, पान, फूल आदि चढ़ाते हैं। मिथिला में पशुबलि भी इन्हें दी जाती है। घर में विवाह और अन्य शुभ अवसरों पर सबसे पहले यहीं आकर प्रणाम किया जाता है।

सिर और धड़ के रूप में अलग–अलग देवियों की पूजा दक्षिण भारत में रेणुका–येलम्मा संप्रदाय के रूप में काफी चर्चित है लेकिन उत्तर भारत में ऐसी लोक देवियां कम हैं। यह गौर करने की बात है कि ताम्रपाषाण काल से ही सिरकटी देवी–देवताओं के चलन होने का पता चलता है आम तौर पर ऐसी देवियों का चलन शिकारी–भोजन संग्राहक समाज की उत्पत्ति थी।

गांव के संरक्षक

इस रूप में इन देवियों का महत्व बहुत बढ़ जाता है। दूसरी महत्वपूर्ण बात यह है कि चूंकि इन देवियों का कोई प्रतिमा शास्त्रीय विवरण नहीं मिलता इसलिए इनके सिर्फ नाम का महत्व है। सिरकट्टी माई की पूजा भी एक पिंडी के रूप में होती है, लेकिन नाम बहुत खास है, जो हजारों सालों के इतिहास को अपने अंदर छुपाए हुए है।

पश्चिम चंपारण के नरकटियागंज के मथुरा गाँव में छोटे से मिट्टी के टीले पर खेत के एक किनारे बने इस देवी स्थान का महत्व इसके नाम में छिपा है। गढ़ी माई का संप्रदाय राजपूत और थारू समुदायों के साथ गहरे जुड़ा हुआ है। इसकी मुख्य विशेषता मिट्टी के ऊंचे टीले के ऊपर बनी पिंडी होती है। आज से कुछ दशक पहले तक पिंडी के ऊपर कोई छत नहीं दी जाती थी मगर अब धीरे–धीरे मंदिर जैसी सरंचनाएं बनने लगी हैं। गढ़ी माई का स्थान पश्चिमी बिहार और नेपाल की तराई में कई जगह मौजूद है, जहां भारी संख्या में बलि चढ़ाई जाती है। इनके टीले बलूचिस्तान में नवपाषाणकालीन झोब संप्रदाय की याद दिलाते हैं, जिसे सिन्धु सभ्यता के विकास और नगरीकरण का श्रेय दिया जाता है। यह गंगा नदी के बाढ़ प्रभावित क्षेत्र में घुमंतू पशुचारी समुदायों के स्थायी बस्तियों में बसने से संबंधित भी हो सकता है।

(साभार: www.bbc.com/hindi)

अंग प्रदेश की लोककथा

बिहुला विषहरी

मंजूषा कला से जुड़ी लोककथा

रंगों, रेखाओं और प्रयोगात्मक बारीकी का नायाब नमूना है अंग जनपद (पुराना भागलपुर प्रमंडल) की प्रख्यात लोककथा बिहुला विषहरी पर आधारित मंजूषा चित्रकला, जिसे लोग मंजूषा शिल्प भी कहते हैं। नागपंचमी पर्व, जिसे मनसा पूजा भी कहा जाता है, बिहुला विषहरी की लोककथा को सुनाने और मंजूषा शिल्प को बनाने का सबसे उपयुक्त दिन होता है। यहां प्रस्तुत है इसी मनसा पूजा से जुड़ी कथा जिसे बिहुला–विषहरी कथा के नाम से भी जाना जाता है। सती बिहुला ने सर्पदंश से मृत अपने पति बाला लखन्दर को कैसे पुनर्जीवित कराया, यह कथा इसी मिथकीय घटना पर आधारित है।

मैना, बिहुला, भवानी, विषहरी और पद्मा पांच बहने थीं। इनका जन्म सोनदह के माया तालाब में भगवान शंकर के स्नान करने के दौरान उनकी टूटी जटा से हुआ बताया जाता है। ये पांचों बहनें मृत्यु लोक में अपनी पूजा कराने की महत्वाकांक्षा पाले हुई थीं। इस बाबत भगवान शंकर ने उन्हें बताया था कि मृत्युलोक में चांद सौदागर नाम का एक व्यक्ति है जो धार्मिक प्रवृति का है। वह यदि उन पांच बहनों की पूजा करना स्वीकार कर लेगा तो मृत्यु लोक में सब उनकी पूजा करने लगेंगे। पांचों बहनें चांद सौदागर के पास गईं लेकिन चांद सौदागर ने वैसा करने से इंकार कर

अंग प्रदेश की लोककथा

दिया। उसके इस व्यवहार से क्रुद्ध होकर विषहरी ने इस अपमान का बदला लेने का निश्चय कर लिया। वह भेष बदलने में माहिर तो थी ही, लिहाजा, वह विषहरी ब्राह्मण का भेष धारण कर अक्सर चांद सौदागर के पास आने लगी। ब्राह्मण विषहर स्वयं निःसंतान था इस कारण चांद सौदागर भीतर से उससे घृणा करता था। चांद सौदागर के छह पुत्र थे। उनके घर आकर ब्राह्मण भेषधारी विषहर जिस जगह पर बैठता था, उसके चले जाने के बाद चांद सौदागर उस जगह की मिट्टी कटवा कर हटवा देता और नई मिट्टी डालकर उस जगह को गोबर से लिपवा देता था। यह जान कर ब्राह्मण विषहर ने सोचा कि निःसंतान होने के कारण ही यह सौदागर मेरा इतना अपमान कर रहा है और बाहर से भक्ति–भाव दिखलाता है। विषहर ने चांद सौदागर से इसका बदला उसे भी निःसंतान बना कर लेने का निश्चय कर लिया। सौदागर ने जब बड़े बेटे का विवाह किया तो सुहागरात में ही विषहर ने सांप भेज कर उसे कटवा दिया जिससे उसकी मृत्यु हो गई। चांद सौदागर के छह पुत्र बारी–बारी से सुहागरात में ही सर्पदंश का शिकार होकर मर गए। वह भी अब विषहर की तरह ही निःसंतान हो गया।

कुछ समय बाद चांद सौदागर को फिर एक पुत्र हुआ जिसका नाम रखा गया बाला लखन्दर। चूंकि पहले ही उसके छह पुत्र शादी के बाद सुहागरात में ही सर्पदंश से मर चुके थे इसलिए चांद सौदागर बाला लखन्दर का विवाह करना नहीं चाहता था। ब्राह्मण भेषधारी विषहरी बाला लखन्दर को भी मौत देने का उपाय सोचने लगी। वह चांद सौदागर का गुरु तो था ही लिहाजा सौदागर की मति फेरते हुए उसे बाला लखन्दर की शादी के लिए राजी करा लिया। बाला लखन्दर का विवाह बिहुला से हुआ। इसमें भी विषहर भेषधारी की महत्वपूर्ण भागीदारी रही। बिहुला सब कुछ जान रही थी, इसलिए बिहुला के कहने पर चांद सौदागर ने एक ऐसा घर बनाने का आदेश दिया जिसमें कहीं भी एक छोटा छिद्र भी नहीं रहे। ऐसे सुरक्षित मकान बनने की खबर जब विषहरी को मिली तो उसे अपनी योजना विफल होती दिखाई देने लगी। फिर भी उसने हार नहीं मानी और कारीगर को बुला कर उसे ऐसी छोटी सुराख मकान की दीवार में छोड़ देने पर राजी कर लिया जिसे आसानी से देखा नहीं जा सके।

बिहुला जब ससुराल के लिए चली तो अपने पिता से एक कुत्ता, एक बिलार, एक नेवला, एक गरूड़, एक घोड़ा और अगर चंदन की लकड़ी मांग कर साथ में लेती आयी। अगर चंदन में ऐसा गुण था कि यदि सर्प के काटने से कोई मर जाता तो उसे घिसकर पिला देने से वह जीवित हो जाता। सुहागरात में बाला लखन्दर और सती बिहुला गाढ़ी निद्रा में थे। विषहरी ने अपने षडयंत्र के तहत उस मकान में जो छोटा छिद्र करवा दिया था वह उसकी योजना में बड़ा कारगर सिद्ध हुआ। इसी छिद्र से विषहरी की प्रेरणा पा कर एक पतला सांप कमरे में घुसा और बाला लखन्दर को डंस लिया। उसने बिहुला को जगाने की कोशिश की मगर गहरी निद्रा में होने के कारण नहीं जग पाई। कहते हैं कि उसकी यह निद्रा भी विषहरी की ही करतूत थी। जिस नागिन ने बाला लखन्दर को डंसा वह बिहुला की ही बहन थी। गुरु विषहरी ने उसे काफी दबाव देकर और डरा–धमका कर भेजा था। डसने के बाद वह भागी नहीं पलंग के नीचे स्थिर रह कर वह रोने लगी। बाला लखन्दर के प्राण पखेरू उड़ चुके थे। बिहुला नींद में पड़ी रही और उसके द्वारा इस संभावित विपदा से बचने के लिए अपने मायके से लायी गई वे पांचों चीजें व्यर्थ साबित हुईं। जब बिहुला की नींद खुली तो बाला लखन्दर को मृत देख वह छाती पीटकर रोने लगी। उसकी यह दशा देख उसके पति को डंसने वाली नागिन ने उसे सांत्वना देते हुए कहा कि तुम रोओ मत। यदि कहोगी तो मैं अभी तुम्हारे पति को जीवित कर दूंगी लेकिन विषहरी की दुर्गति नहीं हो पाएगी। विषहरी के कारण ही तुम्हारे छह जेठ और पति मरे हैं। तुम्हें इसका बदला लेना है। अपने पति की लाश लेकर शीघ्र इन्द्रलोक के लिए प्रस्थान कर जाओ। बिहुला अपने पति की लाश के साथ दो मटकी दही और केला के चार पौधे लेकर इन्द्रलोक के लिए प्रस्थान कर गई। इस दौरान जिस नागिन ने बाला को डंसा था, बिहुला ने उसे भी अपने जूड़े में बांध लिया। बिलार को भी साथ में ले लिया। कुत्ता, नेवला और गरूड़ को छोड़ दिया। बिहुला ने सर्पदंश के उपचारार्थ अपने पति को गंगा पार ले जाने के लिए एक विशेष प्रकार का मंजूषानुमा जलयान बनवाया था। उस पर अपने पति की लाश रख, बिलार को बैठा कर अपने गंतव्य पर निकल गई। लाश पर दही का लेप चढ़ाती रही ताकि लाश खराब न हो। बीच–बीच में बिलार से लाश पर लगी दही चटवा कर लाश को साफ करने के बाद पुनः दही का लेप चढ़ा दिया करती थी। 12 वर्षों की यह यात्रा थी। रास्ते में कई लोगों ने उसे विवाह का प्रलोभन भी दिया लेकिन पतिव्रता बिहुला ने इन प्रलोभनों पर कोई ध्यान नहीं दिया। इधर, विषहरी के क्रोध के कारण चांद सौदागर की संपत्ति नष्ट हो गई और पति–पत्नी दोनों अंधे हो गए। 12 वर्षों तक बिहुला निर्जला उपवास करती रही।

इस प्रकार विविध प्रयोजनों के बाद बिहुला इंद्रपुरी पहुंची और सारी आपबीती देवराज इन्द्र को सुना दिया। उन्होंने बिहुला से कहा कि जो इच्छा हो मांग लो। इस पर बिहुला ने कहा कि उसका सिंदूर लौटाया जाए, छह जेठों को जिलाया जाए और विषहर को उसके हाथों सौंप दिया जाए। तब इन्द्र ने पूछा कि विषहर को लेकर वह क्या करेगी? इसपर उसने कहा कि विषहर को उसको जो करना होगा वह करेगी। अगर विषहर उसे नहीं दिया जायगा तो वह कुछ नहीं लेगी। इन्द्र ने मृत्यु लोक से विषहर को तुरंत इन्द्रलोक लाने का आदेश दिया। विषहर इन्द्रलोक लाया गया। यहां आने पर जब उसने बिहुला को देखा तो उसके होश उड़ गए। बिहुला ने विषहर के सामने ही इन्द्र को उसके तमाम कारनामों से अवगत करा दिया। विषहर ने बिहुला द्वारा अपने पर लगाये गए आरोपों का प्रमाण देने को कहा। बिहुला ने इसके लिए

अंग प्रदेश की लोककथा

कुछ समय की मांग की। वह अपनी मौसी रेघवा के घर जा कर अपने पति की लाश ले आई, जिसे उसने रास्ते में सुरक्षित रख दिया था और साक्षी के रूप में अपने जूड़े में बंधी नागिन को खोल दिया। उस नागिन ने कहा कि वह बारह वर्ष से निर्जला है। बोलने की शक्ति उसमें नहीं है। कुछ खाने के बाद ही सारा हाल बता सकूंगी। इसके बाद बाला लखन्दर की लाश के साथ बिहुला को सुलाया गया। जैसे–जैसे नागिन ने उसे डंसा था, सब प्रत्यक्ष उसने दिखा दिया। इसके बाद इन्द्र महाराज ने उन्हें फिर से जीवित कर दिया। बिहुला इन्द्र की आज्ञा लेकर पति और छह जेठ के साथ अपने घर की ओर वापस चली। सारा समान विषहर के सिर पर लाद कर उसके गले में डोरी बांध ले चली। रास्ते में विषहर की काफी दुर्गति हुई। पति की लाश के साथ इन्द्र लोक आने के क्रम में जिन लोगों ने उसे प्रलोभन दिया था, सबों को बारी–बारी से मुंह से फूंक कर जला दिया।

अंत में वह अपने नगर में आई और अपने पातिव्रत्य धर्म के बल पर सारी नष्ट हुई संपदा को वापस ले आयी। सास–ससुर को जब स्नान कराया तो उनका अंधपन दूर हो गया। सास और ससुर के सातों बेटों को सामने खड़ा कर दिया। इसके बाद डोरी में बंधे विषहर को दिखाते हुए कहा कि ये आपके गुरु महाराज हैं, लीजिए दर्शन कर लीजिए। इतना कह कर गड्ढा खोदवा कर विषहर को उसमें दफन कर दिया गया। कुछ वर्षों तक राज करने के बाद बाला लखन्दर और बिहुला इन्द्रासन प्रस्थान किए और चांद सौदागर के सभी छह पुत्र एवं पुत्रवधू आनंदपूर्वक जीवन बिताने लगे। आज भी सती बिहुला का नाम आदर के साथ लिया जाता है। बिहुला–विषहरी लोक कथा का दर्दनाक पहलू एक गीत की इन पंक्तियों में व्यक्त हुआ है–

''अरे दइबा मनमा में सोंचे काली नगिनियां,
छतिया पीट रोवे लागी हो राम।
अरे दइबा बिहुला त हई मोर बहिनियां,
बाला मोर बहनोइया हवे हो राम।
अरे मइया डसबो जो आपन बहनोइया,
तो हमरो नरकवा होई हो राम।''

संदर्भ यह कि विषहर जब बारी–बारी से बाला लखन्दर को डंसने के लिए सांपों को कोहबर घर में भेजता है तो एक नागिन जो बिहुला के रिश्ते में बहन लगती है, वह बाला लखन्दर को डंसने की हिम्मत नहीं करती। वह वापस अपने गुरू विषहर के पास आ जाती है। वह कहती है कि कमरे का छिद्र पतला है और मेरा शरीर काफी मोटा है। उसमें मेरा प्रवेश असंभव है। इतना सुनते ही ब्राह्मण भेषधारी विषहर कुश की सहायता से दुह–दुह कर उस नागिन के शरीर को पतला बना देता है। इस क्रिया में उसके शरीर के कई टुकड़े हो जाते हैं। धमीन, करईत, गेहुअन, ढ़ोर आदि प्रजाति इसी क्रम में पैदा हुई बतायी जाती है। दूहने की इस प्रक्रिया में उस नागिन को इतनी पीड़ा हुई कि उसने विषहर को सबक सिखाने का निर्णय ले लिया। यही कारण था कि बाला को डंसने के बाद वह भागी नहीं, वहीं ठहर गई और अंत तक अपनी बहन बिहुला का साथ दिया। विषहर की जो दुर्गति हुई उसमें उसका भी योगदान कम नहीं था।

(साभार: hindikahani.hindi-kavita.com)

हर युग, हर काल में जीवंत हैं लोक कथाएं

बच्चों में संस्कार और लोक व्यवहार की वाहक होती हैं लोक कथाएं

मीनाक्षी झा बनर्जी

बिहार की प्रख्यात चित्रकार जिन्होंने अपने चित्रों में बिहार की लोक संस्कृति को बनाए रखा है

...और कब नींद आ गई पता ही नहीं चला। दादी के पास जाने कहाँ–कहाँ की कहानियां होती थीं। कुछ राजा–रानी, कुछ हितोपद. `श, कुछ नामचीन गोनू झा की तो कुछ पंचतंत्र की, ऐसे हमने न जाने क्या क्या सीखा।

लोक कथाएँ मानव समूह की उस साझी अभिव्यक्ति को कहते हैं जो कथाओं के विभिन्न रूपों में अभिव्यक्त होती हैं। सबसे महत्त्वपूर्ण बात यह है कि कुछ निश्चित कथानक– रूढ़ियों और शैलियों में ढली लोककथाओं के अनेक संस्करण, उनकी नित्य नई प्रवृत्तियों और चरित्रों से युक्त होकर विकसित होने के प्रमाण हैं। कहानियों के इतिहास से हमें पता चलता है कि लोककथा हमारे सांस्कृतिक विरासत का एक अभिन्न अंग है। हमारे विविधता से भरे इस देश में कहानियां क्षेत्रीयता के आधार पर भी हैं। जिस मूल कहानी के पात्र भारत के पश्चिम में किसी और नाम से हैं, वही कहानी उत्तर में किसी और नाम से सुनाई जाती है, पर उसका उपदेश एक होने के कारण बच्चों में आने वाले संस्कार, लोक व्यवहार समान रहे हैं।

तब जब हमारे मनोरंजन का एकमात्र साधन थीं लोक कथाएं. ..लोक–कथाओं का अस्तित्व सदियों से रहा है। इसने गाँव–देहात के लोगों को, कम शिक्षित या अशिक्षित लोगों को, मजदूरों, को लोक आचार सिखाया। अधिकांशतः स्त्रियों के द्वारा बनी–बनाई इन लोक कथाओं ने समाज का मनोरंजन तो किया ही है, ज्ञानवर्धन भी किया है। जब मनोरंजन के आधुनिक संसाधन अनुपलब्ध थे, ग्रामीण खेल–कूद और लोक कथाओं के द्वारा ही लोगों का मनोरंजन होता था। जब शिक्षा व्यवस्था सीमित लोगों के लिए थी तब व्यापक जनमानस को शिक्षित करने का काम भी लोक कथाओं ने ही किया था।

रामायण, महाभारत, शिव पुराण, पंचतंत्र, जातक कथायें, राजा रानियों की कहानी इन सब कहानियों ने हमें हिम्मत दी, सही समय पर सही विचार करने का गुण दिया, मौलिक अधिकार से ज्यादा कर्तव्य सिखाया, परोपकार सिखाया। इन लोक गाथाओं ने हमारे विश्वासों और मूल्यों को उजागर कर उसे अगली पीढ़ी तक पहुंचाने को प्रेरित किया। कथाओं ने हौसलों को उड़ान दी, सपने दिये, उलझनों को सुलझाने के उत्तम उपाय बताए।

लोक कथाओं की एक खासियत ये है कि ये सत्य घटनाओं

साझी अभिव्यक्ति

पर आधारित हैं तो समय के साथ भी इनका मूल रूप वही रह जाता है, जबकि कहानियों में कल्पना की गुंजाइश हमेशा रहती है। लोक कथाएं हमारे संस्कार को मजबूत करती हैं। ये आपसी प्रेम, आस्था, विश्वास के मूल्यों को हमारे जीवन में प्रवेश कराने का सबसे आसान तरीका है। लोक कथाओं का एक सबसे बड़ा पहलू ये है कि यह बच्चों को उनके दादा–दादी, नाना–नानी के करीब ले जाती है, संस्कार डालने के साथ मनोरंजन भी कराती है। लोक कथाओं में आदि सभ्यता और संस्कृति का परिचय मिलता है, इसमें लो. कगीतों का संयोजन भी होता है, लोक कथाओं में स्त्री चेतना का स्वर होता है। लोक कथाओं से यह भी स्पष्ट होता है कि मनुष्य प्रारंभ से बहुत कल्पनाशील रहा है। जैसे, ढोला–मारू छत्तीसगढ़ की प्रसिद्ध लोककथा है। ढोला मारू, राजस्थान की एक प्रेम कहानी है जो दो पूरी तरह से अलग संस्करणों राजस्थानी और छत्तीसगढ़ संस्करण में उपलब्ध है। छत्तीसगढ़ संस्करण में, ढोला राजा नल और माता दमयंती का पुत्र है।

अब अगर पंचतंत्र की कहानियों की बात करें, यह लोक कथाओं का ही एक हिस्सा है। पंचतंत्र की कहानियां, सरलता से बताई गईं जीवंत कहानियां हैं। इन कहानियों के जरिए लोक व्यवहार को आसानी से समझाया गया। पंचतंत्र की कहानियां, जानवरों और इंसानों के जरिए नैतिक शिक्षा और जीवन का महत्वपूर्ण सबक देती हैं। पंचतंत्र की कहानियां, बच्चों को समझने में आसान होती हैं। इन कहानियों का अनुवाद दुनिया की लगभग हर भाषा में हो चुका है। पंचतंत्र की कहानियां, नेतृत्व क्षमता विकसित करने का एक सशक्त माध्यम हैं।

ऐसे ही तेनालीराम, गोनू झा, बीरबल इत्यादि की कहानियाँ हमें नैतिक ज्ञान देती है। बुद्धि विवेक से काम लेना सिखाती है। निश्चित तौर पर विश्व के हरएक कोने मे लोक कथाएँ सुनी–सुनाई जाती रही होंगी। सदियों से मौखिक रूप में चली आ रहीं लोक कथाएँ अब बहुत अधिक मात्रा में मुद्रित रूप में भी उपलब्ध हैं। अब ये पढ़ी जा रही हैं और पढ़कर बच्चों को सुनाई जा रही हैं। समाज आज तकनीकी रूप से कितना भी विकसित हो जाए, पर जहां तकनीकी का अति प्रयोग दिमाग को विक. सित कर रहा है, वहीं व्यावहारिक रूप से समाज संकुचित हो रहा है। इस दौर में भी लोक कथाओं से समाज में व्यवहार और जीवन के मूल्य बचे रहेंगे। इस तरह बच्चे लोक कथा की परंपरा से आज भी जुड़े दिखाई देते हैं। इससे यह आश्वस्ति मिलती है कि लोक कथाएँ सदा बनी रहेंगी, इनका अस्तित्व कभी समाप्त नहीं होगा।

पंडवानी यानी पांडववाणी

महाभारत और रामायण दोनों का समावेश

पंडवानी, छत्तीसगढ़ का वह एकल नाट्य है, जिसके बारे में दूसरे देश के लोग भी जानकारी रखते हैं। तीजन बाई ने पंडवानी को आज के संदर्भ में ख्याति दिलाई, न सिर्फ हमारे देश में, बल्कि विदेशों में। पंडवानी का अर्थ है पांडववाणी– अर्थात पांडवकथा, महाभारत की कथा। ये कथा 'परधान' तथा 'देवार' जातियों की गायन परंपरा है। परधान है गोंडों की एक उपजाति और देवार है घुमन्तू जाति। इन दोनों जातियों की बोली, वाद्यों में अन्तर है। परधान जाति के कथा वाचक या वाचिका के हाथ में होता है 'किंकनी' और देवारों के हाथों में 'रूंझू'। परधानों ने और देवारों ने पंडवानी लोक महाकाव्य को पूरे छत्तीसगढ़ में फैलाया।

गोंड जनजाति के लोग पूरे छत्तीसगढ़ में वास करते हैं। परधान गायक अपने यजमानों के घर में जाकर पंडवानी सुनाया करते थे। देवार जाति के बारे में ऐसा कहा जाता है कि गोंड बैगा भूमिया जातियों से बनी है। बैगा एक जाति है। इसके अलावा गांव में देवता के पुजारी को भी बैगा कहा जाता है। ये बैगा झाड़ फूँक में माहिर होते हैं तथा जड़ी बूटियों के बारे में उनका ज्ञान गहरा होता है। मण्डला क्षेत्र में जो ग्राम पुजारी होते हैं, वे अपने आपको बैगा नहीं कहते हैं। वे अपने आप को देवार कहते हैं। देवार गायक भी पंडवानी रामायणी महाकाव्य गाते हैं।

परधान गायक हमेशा गोंड राजाओं की प्रशंसा करते हुए गीत गाया करते थे। कुछ लोग परधान को गोंडो के चारण कवि कहते हैं। उनके गोंडवानी और करम सैनी गोंड जनजाति के अतीत के बारे में है जिसमें इतिहास एवं मिथकों की झलकें हैं।

परधान पण्डवानी महाभारत पर आधारित होने के साथ–साथ गोंड मिथकों का सम्मिश्रण है। अगर महाभारत का नायक अर्जुन है तो पण्डवानी का नायक है भीम। भीम ही है जो पाण्डवों की सभी विपत्तियों से रक्षा करता है। पण्डवानी में माता कोतमा कुन्ती को कहा गया है। गान्धारी को गन्धारिन। गन्धारिन के इक्कीस बेटे दिखलाए गए हैं। पण्डवानी में जिस क्षेत्र को दिखाया गया है, वह छत्तीसगढ़ ही है। पाण्डव जहाँ रहते थे उसे जैतनगरी कहा गया है। कौरवों के निवास स्थान को हसना नगरी कहा गया है। पंडवानी में पाण्डव तथा कौरव दोनों पशुपालक हैं। पांडव और कौरव पशुओं को लेकर चराने जाते थे। पशुओं में थे गाय, बकरियाँ और हाथी। कौरव हमेशा अर्जुन को तंग किया करते थे और भीम कौरवों को सबक सिखलाते थे।

पण्डवानी में कौरवों ने एक बार भीम को भोजन के साथ विष खिलाकर समुद्र में डुबा दिया। भीम जब पाताल लोक में पहुँचता है, सनजोगना उसे अमृत खिलाकर पुनर्जीवित करती है। सनजोगना थी नाग कन्या, पाताल

लोक में भीम और सनजोगना का विवाह होता है। कुछ दिन के बाद भीम छटपटाने लगता है, अपना माँ और भाईयों को देखना चाहता है। तब सनजोगना भीम को पाताल लोक से समुद्र तट पर ले आती है। भीम अपनी माता कोतमा और चार भाइयों के पास पहुँचकर बहुत खुश हो जाता है। जब कौरवों ने लख महल में पाण्डवों को मारना चाहा, भीम ही था जो पाताल लोक तक एक पथ का निर्माण करता है और सबकी सुरक्षा करता है। इस घटना के बाद भीम अपनी माँ और भाइयों को लेकर बैराट नगर पहुँचता है। बैराट नगर के राजा का नाम संगराम सिंह है। उसी बैराट नगर में कोचक का भीम वध करता है।

पण्डवानी में महाभारत के युद्ध को महाधान की लड़ाई बताया गया है। और इस युद्ध के संदर्भ में द्रौपदी की सोच बहुत ही अलग दिखाई गई है। जैसे द्रौपदी सोचती है कि कौरवों के खिलाफ इस युद्ध में पान्डव कभी जीत नहीं पायेंगे। क्यों न मैं कौरवों से विवाह करुं? ये सोचकर द्रौपदी पांडवों को भोजन के साथ विष देती है, और पांडवों की मृत्यु के बाद एक घड़े में हल्दी घोलकर हसनापुर की ओर चल देती है। घड़ा अपने सिर पर रख द्रौपदी चलती रहती है और जब हसनापुर पहुँचती है, तब वह हल्दी का पानी कौरव भाइयों पर डाल कर उन इक्कीस भाइयों की पत्नी बन जाती है। उधर पांडवों को मृत देख माँ कोतमा अयोध्या जाती है और अपने भाई रामचन्द्र को सब बात बताती है। यहाँ महाभारत और रामायण एक हो जाता है। रामचन्द्र पहले अमृत छिड़कते हैं पांडवों पर और उसके बाद बेल का डंडा लाकर उन भाइयों को सुंघाते हैं। पांडव पुनर्जीवित हो जाते हैं। इसके बाद जब भीम द्रौपदी को लेने जाते हैं, द्रौपदी देवी बनकर चारों तरफ आग फैलाती है। उनकी जीभ बाहर निकल आती है और नौ कोस तक फैल जाती है। द्रौपदी भीम को मारने के लिए अग्रसर होती है। उसके एक हाथ में खप्पर और दूसरे हाथ में कृपाण होता है। उस वक्त भीम अपनी छिंगुली अंगुली काटकर द्रौपदी के खप्पर में रख देता है। इसके बाद द्रौपदी शान्त हो जाती है। जैसे ही द्रौपदी शान्त हो जाती है, वह कहने लगती है–''अब मैं पंडवन को बचाऊँगी कँवरन को खाऊँगी''।

पंडवानी करने के लिए किसी त्यौहार या पर्व की जरूरत नहीं होती है। कभी भी कहीं भी पंडवानी प्रस्तुत कर सकते हैं। कभी–कभी कई रातों तक पंडवानी लगातार चलती रहती है। वर्तमान में पंडवानी गायिका गायक तंबूरे को हाथ में लेकर स्टेज में घूमते हुए कहानी प्रस्तुत करते हैं। तंबूरे कभी भीम की गदा तो कभी अर्जुन का धनुष बन जाता है। संगत के कलाकार पीछे अर्ध चन्द्राकर में बैठते हैं। उनमें से एक 'रागी' है जो हुंकारु भरते जाता है और साथ–साथ गाता है, रोचक प्रश्नों के द्वारा कथा को आगे बढ़ाने में मदद करता है।

पंडवानी की दो शैलियाँ हैं– एक है कापालिक शैली जो गायक गायिका की स्मृति में या 'कपाल' में विद्यमान है। दूसरी है वेदमती शैली जिसका आधार है शास्त्र। कापालिक शैली है वाचक परम्परा पर आधारित और वेदमती शैली का आधार है खड़ी भाषा में सबलसिंह चौहान की महाभारत, जो पद्यरूप में हैं।

विद्वानों का कहना है कि वास्तव में सबलसिंह चौहान ग्रन्थ पर आधारित शैली को पंडवानी न कहकर महाभारत की एक शैली कहा जाना चाहिए, क्योंकि पंडवानी का छत्तीसगढ़ में प्रचार प्रसार ब्राह्मणेत्तर परधान एवं देवार गायकों के पूर्व में ही स्थापित कर दिया था, इसलिये बाद में विकसित हुई वेदमती शैली के ब्राह्मणेत्तर जाति के कलाकारों ने उसी रूढ़ नाम को अपनी शैली के लिये अपना लिया। वेदमती शैली के गायक गायिका वीरासन पर बैठकर पंडवानी गायन करते है। श्री झाडूराम देवांगन, महाभारत के शांति पर्व को प्रस्तुत करनेवाले निःसंदेह सर्वश्रेष्ठ कलाकार है। साथ ही, पुनाराम निषाद तथा पंचूराम रेवाराम पुरुष कलाकारों में हैं जिन्होंने वेदमती शैली को अपनाया है। महिला कलाकारों में है लक्ष्मी बाई एवं अन्य कलाकर। कापालिक शैली की विख्यात गायिका हैं तीजन बाई, शांतिबाई चेलकने, उषा बाई बारले।

पंडवानी के कुछ अंश जिसे रामहृदय तिवारी जी ने छत्तीसगढ़ी गीत में प्रस्तुत किया है, कुन्ती और कर्ण संवाद –

''कुन्ती कहे नहीं बेटा पाण्डव अउकरण तो दोनों झन मोर बेटा आव, सहोदर भाई आव। आज गंगा नदी के किनारे आज में तोला जन्म देयेंव करण, आज ते मोर जेठ बेटा उस बेटा, लड़ाई झगड़ा काम नइ आवे, जाके पाण्डव से सुन्दर मिल जा बेटा।

माता कुन्ती बार–बार समझावे।

अऊ सच में कहाथौ ते मोर बेटा अस अतका बचन ला करन सुनन लागे भैयाजी। काकरों दाई मोर काकरि डारों भैया मोर, ये दाई सुन ले कहे करण राजा दुर्योधन के में नमक खाय हौं, अतका दिन ले मोर दाई कहाँ चल दे रेहेस, आज अर्जुन ल में मारहूं कहाथों तब तै मोला रिश्ता बनाय ल आय हस, तें काबर मन दुखी करथस माता, तोर पांच बेटा हा हमेसा जीवित रिही चाहे अर्जुन मरे, चाहे करण मरे अइसे बचन ला करण बोलन लागे भाई जेकर बचन ला मइया कुन्ती सुने भाई भरभर भैय्या मोर रोबन लागे भाई।''

अर्थात्, माता कुन्ती कर्ण से कहती है – हे कर्ण तुम और पाण्डव भाई–भाई हो। सहोदर हो। गंगा के तट पर मैंने तुम्हें जन्म दिया था। तुम मेरे ज्येष्ठ पुत्र हो कर्ण। जाकर पाण्डवों के साथ मिलकर रहो। लड़ाई झगड़े में नुकसान है बेटा। मैं सत्य बोल रही हूँ, तुम मेरे ही पुत्र हो। इतना सुनने के बाद कर्ण बोले – मैंने राजा दुर्योधन का नमक खाया है, इतने दिन तक, जब मै भटक रहा था तब मेरी माँ कहाँ थी? आज जब मैंने अर्जुन को मारने की कसम खाई है तब आप मझे बेटा कहने आ गई। कोई बात नहीं माँ, आपके पाँच पुत्र जीवित रहेंगे – कर्ण या अर्जुन दोनों में से कोई एक नहीं रहेगा।

(साभार: ignca.gov.in)

कुमाऊंनी लोक कथा

चल तुमड़ि बाटे बाट

बड़ी पुरानी बात है। एक गांव में एक बुड्ढा और बुढ़िया रहा करते थे। जिन्दगी के तीन–तिहाई दिन साथ बिताने के बाद भी दोनों के बीच खूब लड़ाई–झगड़ा हुआ करता। एक बेटी थी जिसकी सालों पहले शादी हो चुकी थी।

हर दिन होने वाले झगड़ों से तंग आकर एक दिन बुढ़िया ने बुड्ढे से कहा– ''हम दोनों को अलग–अलग हो जाना चाहिये। जो कुछ भी हमारे पास है उसे आपस में बांट लेते हैं।'' बुढ़िया की बात सुनकर बुड्ढे को लगा कि रात–दिन के लड़ाई झगड़े से तो बेहतर अलग–अलग रहना ही है। बुड्ढा बोला– ठीक है हम दोनों अलग हो जाते हैं। बुड्ढे और बुढ़िया के पास आपस में बांटने को जायदाद तो हुई नहीं। ले दे कर एक गाय और एक बैल ही तो था। गाय आई बुढ़िया के हिस्से और बैल आया बुड्ढे के हिस्से। बुढ़िया की गाय दूध देने वाली थी। बुड्ढा सुबह होने से एक पहर पहले ही बुढ़िया के गोठ जाता और उसका सारा दूध लगा आता। बुढ़िया कुछ कहती तो कहता– ''मेरा बल्द ब्या रखा है उसी की धिनाली खाता हूँ।''

जब बुढ़िया को खाने पीने की कमी होने लगी तो उसने सोचा कि कुछ दिन बेटी के घर होकर आया जाये। तब तक बुड्ढे से निपटने का कोई रास्ता ही सूझ जाये! यही सोचकर बुढ़िया अपनी बेटी के घर की ओर लगी। बेटी के घर के लिये जंगल का रास्ता पकड़ा ही था कि एक बाघ मिल गया। कहने लगा– ''बुढ़िया रे बुढ़िया! तूने सुना की नहीं, मैंने है तुझे खाना.. कहाँ को जो है तेरा जाना।''बुढ़िया ने कहा– ''आज मैं अपनी बेटी के ससुराल को लगी हूँ। चार दिन वहां रहकर खूब खाऊँगी पियूंगी और मोटी होकर आऊंगी, तब तू मुझे खाना।'' बाघ को बुढ़िया की बात जंच गयी और उसने बुढ़िया को जाने दिया।

बाघ से निपटकर बुढ़िया थोड़ा आगे पहुंची ही थी कि भालू मिल गया। भालू ने भी बुढ़िया से वही कहा और बुढ़िया ने भालू को भी वही जवाब दिया। बात भालू को भी जंच गयी। आगे जाकर बुढ़िया शेर से टकरा गयी। शेर ने भी बुढ़िया से वही कहा और बुढ़िया ने अपनी बात फिर वही कही। शेर भी राजी हो गया। जैसे–तैसे कर बुढ़िया अपनी बेटी के ससुराल पहुंची।

बेटी के ससुराल में बुढ़िया की खूब आव–भगत हुई। बुढ़िया ने रास्ते की बात किसी को नहीं बताई। बेटी अपनी मां का खूब ख्याल करती। एक से एक पकवान बनाकर खिलाती पर बुढ़िया के शरीर में कुछ न लगता बल्कि वह तो दिन पर दिन सूखती जा रही थी। बेटी के मन को यह बात अच्छी न लगी. उसने अपने मन से कहा– ''ईजा मैं तुझे हाथ पैर तक हिलाने नहीं दे रही, अच्छा बुरा जैसा भी होता है खाना–पीना भी मैं पूरा दे ही रही हूँ, फिर भी तेरे शरीर को कुछ लगता ही नहीं। लगना तो छोड़ ईजा तू तो और ही सूखती जा रही है। तेरे मन में कोई दुःख है तो तू मुझे बता न।'' बुढ़िया ने बेटी को घर से रास्ते तक की पूरी बात बता दी। बेटी ने कहा– ''अरे ईजा तू फिकर न कर मैं सब जुगुत ठीक कर दूंगी।'' बुढ़िया का मन अब हल्का हो गया और खाना भी उसे लगने लगा। अब आया अपने घर लौटने का दिन। बुढ़िया की बेटी ने एक बड़ी तुमड़ि में काला मोसा लगाकर बैठा दिया और बुढ़िया के हाथ में पकड़ा दी एक पुंतुरि। पुंतुरि में उसने पीसी हुई मिर्च को नमक संग मिलाकर रखा था। बेटी ने तुमड़ि को लगाया बुढ़िया के घर के रास्ते और दिया धक्का तो चलने लगी तुमड़ि गोल–गोल।

रास्ते में तो बाघ, भालू और शेर इंतजार कर रहे थे। शेर ने रास्ते में घुड़–घुड़ करके आती तुमड़ि को देखा तो पूछा– ''तुमड़ि ओ तुमड़ि.. क्या तूने रास्ते में किसी बुढ़िया को देखा।'' तुमड़ि के भीतर से ही बुढ़िया ने कहा– ''रस्ते–रस्ते चल तुमड़ि हम क्या जानें बुढ़िया की बात।'' तुमड़ि जब गुरकते हुए थोड़ा आगे पहुंची तो बाघ मिल गया। बाघ ने भी वही सवाल किया और बुढ़िया ने वही जवाब दिया और तुमड़ि अपने रस्ते गुरकती रही।

अब तुमड़ि को मिला भालू। भालू ने भी तुमड़ि से वही सवाल पूछा और बुढ़िया ने वही जवाब दिया। तुमड़ि अपने

कुमाऊंनी लोक कथा

रस्ते गुरकती, इससे पहले भालू को आ गया गुस्सा। भालू ने तुमड़ि पर एक जोर की लात मार दी तो तुमड़ि के टुकड़े–टुकड़े हो गये और बुढ़िया दिखने लगी। तब तक बाघ और शेर भी वहां पहुंच गये। भालू, बाघ और शेर तीनों ने कहने लगे– "मैं बुढ़िया को खाऊंगा, मैं बुढ़िया को खाऊंगा। तीनों आपस में लड़ने लगे तो बुढ़िया ने कहा– अरे बच्चों लड़ो मत एक काम करते हैं, मैं ऊपर पेड़ में चढ़ जाती हूँ, फिर वहां से कूद जाऊंगी जिसके हाथ लगी वो मुझे खा लेना।" तीनों जानवर बुढ़िया की बात मान गये। बुढ़िया पेड़ में चढ़ी और अपनी पुंतुरि खोलने लगी।

तीनों जानवर बुढ़िया का इंतजार करते हुये पेड़ की तरफ आँखें गढ़ाये खड़े थे कि बुढ़िया ने पुंतुरि से मिर्च और नमक फेंक दिया। तीनों जानवरों की आंख में मिर्च गयी तो दर्द से फुराड़ीकर एक दूसरे को नो. चने लगे और बुढ़िया वहां से खिसक गयी। घर पहुंची तो बूढ़े ने देखा उसकी घरवाली तो काले रंग में रंगी हुई है। बूढ़े ने पूछा– "क्यों रे आज तेरा रंग काले मसाण जैसा क्यों हो रखा?" बुढ़िया ने कहा– "रास्ते में एक गाड़ पड़ी मैंने उसके पानी में आग लगा दी तो मेरा रंग काला हो गया।" बुड्ढे ने कहा– "आरे पागल कहीं पानी में भी आग लगती है क्या?" बुढ़िया ने कहा– "क्यों नहीं बैल भी तो ब्या जाता है।" बुढ़िया की बात सुनकर बुड्ढे को बड़ी खिसेन पड़ गयी और उस दिन से उसने गाय को हाथ लगाना छोड़ दिया और फिर कुछ दिनों बाद दोनों का फिर से मेल हो गया।

(साभार: devbhoomidarshan.in)

ठेकुवा और ठेकुली

पुराने समय की बात है। कुमाऊं के एक गांव में गौरी नाम की सुंदर युवती थी। उसका विवाह पास के ही एक गांव के लड़के से तय हुआ। युवक मेहनती और बुद्धिमान था, गांव में उसका बहुत मान–सम्मान था लेकिन कद में छोटा और रंग–रूप में साधारण था। कद छोटा होने के कारण लोग उसे ठेकुवा कहते थे। वहीं ठेकुवा की पत्नी गौरी को लोग ठेकुली कहने लगे थे। रूपवती गौरी दु:खी रहने लगी। लोग उसे भी ठेकुली कहकर मजाक करने लगे थे। एक दिन उसने अपने पति से कहा– ठेकुवा देखो! आप में सब गुण ठीक हैं लेकिन जो आपका ये नाम ठेकुवा है इससे पूरे गांव वाले हमें ठेकुवा और ठेकुली कहकर मजाक उड़ाते हैं, जो मुझे बिल्कुल भी अच्छा नहीं लगता है। ठेकुवा समझदार था, उसने ठेकुली (गौरी) को समझाया कि नाम में कुछ नहीं रखा है, बस हमारे अच्छे कर्म होने चाहिए। ठेकुली, अपने पति ठेकुवा की बातें मानने को तैयार नहीं हुई। ठेकुवा जानता था कि नाम में कुछ नहीं रखा है। उसने एक जुगत लगाई और ठेकुली से कहा कि वो दोनों सबसे अच्छा नाम ढूंढने शहर जाएंगे।

अगली सुबह ठेकुवा और ठेकुली शहर की ओर निकल पड़े। उन्होंने सबसे पहले सुबह रास्ते में पड़ने वाले मंदिर में एक सुंदर महिला को झाडू लगाते देखा। ठेकुवा ने ठेकुली से कहा– जा ठेकुली, उस झाडू लगाने वाली महिला से पूछ तो उसका क्या नाम है? ठेकुली गई और पूछा दीदी आपका क्या नाम है? महिला ने उत्तर दिया–लक्ष्मी। यह नाम सुनकर ठेकुली निराश हो गई। उसने सोचा था लक्ष्मी नाम की महिलाएं बहुत धनवान होती होंगी और उनके जीवन में आराम रहता होगा। वे यहां से आगे की ओर निकल गए। कुछ दूर पहुंचे ही थे, उन्हें रास्ते में भीख मांगता हुआ व्यक्ति दिखाई दिया। उन्होंने उस भिखारी से पूछ लिया कि उसका क्या नाम है? भिखारी ने अपना नाम बताया– धनपति। धनपति नाम सुनकर वे फिर आश्चर्य में पड़ गए। नाम धनपति यानि धनवान व्यक्ति फिर भी भीख मांगकर अपना पेट पाल रहा है। ठेकुवा और ठेकुली यहां से भी अपने अच्छे नए नाम की खोज में आगे निकल पड़े।

कुछ मील पैदल चलने पर उन्हें एक शवयात्रा मिल गई। ठेकुवा और ठेकुली ने पूछ लिया– कौन मर गए ये? लोगों ने कहा– बड़े अच्छे सज्जन व्यक्ति थे ये, इनका नाम अमर सिंह है। फिर वे आश्चर्य में पड़ गए। सोचने लगे नाम अमर और मर गए। ठेकुवा ने ठेकुली से कहा– ठेकुली देख, जिसका नाम लक्ष्मी है वह झाडू लगाकर साफ–सफाई कर रही है। जिसका नाम धनपति है वह भीख मांगकर आपका गुजर बसर कर रहा है और वहीं अमर नाम का व्यक्ति भी अमर नहीं रहा, कुछ ही देर में उसकी चिता जलेगी और वह मिट्टी में मिल जाएगा। ठेकुली अब बता हम अब आगे जाएं अपने नाम की खोज में या बस यहीं तक। ठेकुली सोच में पड़ गई। उसने ठेकुवा से कहा– ठेकुवा आपने सही कहा था, नाम की सार्थकता काम में होती है। हमारा यही ठेकुवा और ठेकुली नाम ठीक है, हम अपने इसी नाम को लेकर अपने गांव जाएंगे। वे दोनों खुशी–खुशी यह दोहा कहते–कहते घर लौट गए –

"लक्ष्मी जैसे झाड़ू लगाए,
धनपति मांगे भीख।
अमर नाम का मर गया,
मेरा ठेकुवा नाम ठीक।।"

राजस्थानी लोक गाथाएं

ऋग्वेद की स्तुतियों में भी हैं लोक गाथाएं

डॉ सतपाल सिंह

लेखक की पुस्तक 'राजस्थानी भाषा और साहित्य' 2015 में प्रकाशित हुई थी और भारतीय भाषाओं के लोक सर्वेक्षण के राजस्थान संस्करण में राजस्थानी भाषाओं की चार बोलिओं पर हिंदी व अंग्रेजी में शोध प्रकाशित हुआ।

लोक गाथाओं के अध्ययन की दृष्टि से भारतीय लोकसाहित्य बेहद महत्त्वपूर्ण है। यहाँ की संस्कृत, प्राकृत, पाली, अपभ्रंश तथा मध्यकालीन क्षेत्रीय भाषाओं में विपुल परिमाण में लोक ने गाथाओं का सृजन किया जो विविध रूपों में गाई और कही जाती हैं। वेद, उपनिषद, पुराण, बौद्ध, जैन एवं अन्य दार्शनिक ग्रंथों पर भी इन गाथाओं का प्रभाव देखा जा सकता है। भारतीय लोक गाथाएँ लोक की साहित्यिक अभिव्यक्ति और सुदूर अतीत की परंपरा की संवाहक हैं। इनके तत्व ऋग्वेद की स्तुतियों में भी देखे जा सकते हैं। इसके पश्चात् ब्राह्मण ग्रंथों, में भी अनेक गाथाओं को कथा रूप में प्रस्तुत किया गया है। डॉ. सत्येन्द्र भारतीय कथा साहित्य परम्परा पर लिखते हैं कि लोकवार्ता के परम्परा प्राप्त भण्डार में से साहित्य ने कभी कोई सामग्री ग्रहण की, कभी कोई। कभी भगवान विष्णु को महत्व दिया तो कभी शिव को। समय बीतते–बीतते महत्व के बिन्दु बदलते गये, नये भावों के अनुरूप पुरानों को ढालने की चेष्टा की गयी। इन्द्र का जो महत्व हमें वेद में मिलता है वह पुराणों में नहीं मिलता। इस समय तक आते आते गाथा का स्वरूप अधिक पुष्ट होता प्रतीत होता है। प्राचीन आख्यानों, उपाख्यानों, गाथाओं के संकलन का ही नाम 'पुराण' माना गया है। पुराण काल से बुद्ध के समय में आते–आते गाथाओं का प्रचलन सवर्साधारण में हो गया। इसके बाद विभिन्न अपभ्रशों और उनसे निकली भारतीय भाषाओं में गाथाओं का सृजन हुआ। इस तरह उपनिषद काल आते–आते इन गाथाओं का स्वरूप परिवर्तित हुआ और उनके कथानक ने नया बाना धारण किया। पुराण युग में इनका स्वरूप अधिक पुष्ट हुआ। महाभारत को तो वर्णन प्रधान गाथा का महत्वपूर्ण उदाहरण कहा जा सकता है। महात्मा बुद्ध सदैव लोक के निकट रहे और अपने उपदेशों में लोक भाषा का सहारा लिया। उनके समय में गाथाओं का सर्वाधिक प्रचलन आम

जन में हुआ। बुद्ध के जीवन से जुड़ी अनेक गाथाएँ पाली भाषा में रचित 'जातक' ग्रंथों में संग्रहित की गईं। अपभ्रंश और प्राचीन राजस्थानी भाषा में 'रासक' या 'रासो' ग्रंथों के रूप में हजारों लोक गाथाएँ लोक में प्रचलित हुईं। उक्त विवेचन से स्पष्ट होता है कि भारतीय लोकसाहित्य में लोकगाथाओं का रचाव विपुल मात्रा में हुआ है और यह परंपरा लिखित साहित्य को भी प्रभावित करती रही है।

लोक गाथा का अर्थ एवं परिभाषा

लोक साहित्य की एक जनजीवन से जुड़ी बेहद लोकप्रिय विधा 'लोक गाथाएँ' हैं जिनमें माटी की सौंधी महक है। पाश्चात्य साहित्य अथवा अंग्रेजी भाषा में इसे Ballad नाम से जाना जाता है जिसका शाब्दिक अभिप्राय 'लम्बा गीत' होता है। सोहनदास चारण (2016) व नंदलाल कल्ला (2016) जैसे शोधकर्ता इसके विभिन्न नामकरण करते हैं जिनमें से कुछ निम्नलिखित हैं –

1. ग्राम गीत
2. नृत्य गीत
3. आख्यान गीत
4. आख्यानक गीत
5. वीर गाथा या वीर काव्य इत्यादि

उपरोक्त सभी शब्द अंततः 'लोकगाथा' के रूप में प्रतिष्ठित हो गये। अंग्रेजी का शब्द 'बैलेड' लैटिन शब्द Ballare से बना है जिसका शाब्दिक अभिप्राय 'नाचना' होता है। इनसाईक्लोपीडिया ब्रिटेनिका में कहा गया है कि लोकगाथा एक ऐसी पद्य शैली है जिसका सृजनकर्ता अज्ञात होता है। इसमें साधारण उपाख्यान का वर्णन होता है जो सरल एवं मौखिक याद रखने की परंपरा के लायक होता है। लोकगाथा में ललित कला जैसी जटिलताएँ, सूक्ष्मताएँ एवं दुश्वारियाँ नहीं होती हैं। लोकगाथा एक ऐसा गीत होता है जिसमें कोई कथा कही होती है।

राजस्थान की लोक गाथाएं

राजस्थान प्रदेश में मिलने वाली लोक गाथाओं पर किसी व्यक्ति विशेष की छाप नहीं है। इनका रचयिता समस्त समाज है। अपने प्रारंभिक स्वरूप से वर्तमान तक इनमें असंख्य परिवर्तन भी हुए हैं। मंगलाचरण लोक गाथाओं के प्रस्तुतिकरण के समय प्रत्येक गाथा के आरंभ में मंगलाचरण का विधान होता है जिसमें सर्वप्रथम गणेश वंदना के उपरांत देवी–देवताओं की स्तुति की जाती है। कुछ गाथाओं में हिन्दू देवों की स्तुति के साथ मुस्लिम पीर–पैगम्बरों की भी स्तुति की गई है। इसी तरह राजस्थानी लोक गाथाओं में गाथा प्रस्तुतिकरण के समय लोक वाद्यों का प्रयोग किया जाता है। प्रत्येक गाथा के साथ लोकवाद्य जुड़ा होता है जो उसकी विशिष्ट पहचान होता है। वाद्यों का प्रयोग गाथा के साथ संगीत का विधान करने के लिए होता है। जैसे पाबूजी की गाथा के साथ 'रावण हत्था', रामदेवजी की गाथा के साथ 'तंदूरा', गोगाजी की गाथा के साथ 'डेरूं' और बगड़ावत गाथा के साथ 'थाली' आदि वाद्ययंत्रों की संगत जुड़ी होती है।

राजस्थान प्रदेश की अधिकांश गाथाओं के नायक स्थानीय हैं और इन गाथाओं के कथानक में स्थानीय परिवेश की पूरी–पूरी छाप है। यहाँ के रहन–सहन, रीति–रिवाज, खान–पान, वेशभूषा आदि का वर्णन इन गाथाओं में दृष्टिगोचर होता है। इसके साथ ही यहाँ की प्रकृति तथा जीव–जन्तुओं का भी वर्णन इनमें देखा जा सकता है। प्रसिद्ध लोकगाथा 'ढोला–मारु' में गाथा के नायक ढोला और नायिका मारवणी के संवाद में ग्रीष्मकाल का वर्णन मिलता है–

थळ तत्ता, लू सांमुही, दाझोला परियाह।
म्हांकउ कहियउ जउ करउ घरि बइठा रहियाह।।

(साभार: www.sahapedia.org)

भिखारी ठाकुर के गीतों में लोक वेदना के स्वर

भोजपुरी बिहार, पूर्वी उत्तर प्रदेश और नेपाल के तराई इलाकों में बड़े पैमाने पर बोली और समझे जाने वाली भाषा है। भोजपुरी फिल्म और गीत–संगीत के अलावा लोक संगीत का दायरा भी काफी विस्तृत है और इसकी एक पहचान के तौर पर भिखारी ठाकुर हमेशा याद किए जाते रहेंगे। आधुनिकतम तकनीक के दौर में लोक संस्कृति को बचाने का संकट है, ऐसे में भोजपुरी समाज के लिए भिखारी ठाकुर की विरासत को बचाने की चुनौती है।

भिखारी ठाकुर का जन्म बिहार के एक गरीब और उपेक्षित हजाम परिवार में 18 दिसंबर, 1887 को हुआ था। गरीबी और वर्ण व्यवस्था के तहत निचली जाति में आने के चलते भिखारी ठाकुर को पढ़ने लिखने का मौका नहीं मिला। बचपन में वे गाय–भैंस चराने लगे थे। जानवरों को चराने के समय ही भिखारी ठाकुर अपनी मधुर आवाज में गाते गुनगुनाते थे। वे पढ़ तो नहीं सकते थे लेकिन सुनकर याद करने लगे और इस दौरान उन्होंने रामचरितमानस की चौपाइयां, कबीर के निर्गुण भजन और रहीम के दोहों को कंठस्थ किया। यहां से शुरुआत करके वे भोजपुरी गीत संगीत की दुनिया के सबसे बड़े आयकन बने।

उनका गांव कुतुबपुर पुराने शाहाबाद (अब भोजपुर जिला) का हिस्सा है, लेकिन गंगा नदी के रास्ता बदलने की वजह से 1926 में कुतुबपुर सारण जिले का हिस्सा हो गया। बचपन में ही उनकी शादी मतुआ देवी से हो गई और जल्दी ही वे शिलानाथ के पिता भी बन गए। जानवरों को चराने के अलावा परिवार का गुजर बसर चलाने के लिए भिखारी ठाकुर अपने पुश्तैनी नाई का काम करने लगे थे। 1927 में अकाल के बाद वे आजीविका कमाने के लिए पहले खड़गपुर और फिर बाद में जगन्नाथपुरी गए। हिंदू धर्म के रीति रिवाजों और संस्कारों के लिए हजाम, ब्राह्मणों की तरह ही महत्वपूर्ण माने जाते हैं। उदाहरण के लिए हजाम की जरूरत मुंडन, जनेऊ, शादी और श्राद्ध सभी जगहों पर होती है. लेकिन सामाजिक पायदान पर उनकी हैसियत पुजारी जितनी नहीं होती है। उन्हें 'निचली जाति' का माना जाता है, यही वजह है कि भिखारी ठाकुर को भी अपने जीवन में खराब व्यवहार और अपमान का दंश झेलना पड़ा। लेकिन उनकी गायकी ने उन्हें सामाजिक जटिलताओं और विसंगतियों की तरफ देखने का अवसर भी मुहैया कराया। उन्होंने समाज को बारीकी से देखा और उसे लोकगीतों के माध्यम से आम लोगों के सामने रखा।

आजीविका के सिलसिले में उन्हें प्रवासी मजदूर के तौर पर दूसरे राज्य में जाना पड़ा। वहां भी उन्होंने प्रवासी मजदूरों के दर्द और तकलीफ को नजदीक से देखा। भिखारी ठाकुर उसे विदेश (हालांकि वो देश के अंदर ही एक राज्य से दूसरे राज्य गए थे) कहते थे। विदेश जाकर भी कमाने से उनके परिवार की हैसियत में कोई बदलाव नहीं आया। इस दौरान वे अपने गांव के लोगों और परिवार वालों की कमी महसूस करते थे। कुछ साल बाहर रहने के बाद वे अपने गांव कुतुबपुर लौट आए थे, ताकि सुख दुख अपने परिवार और गांवों के लोगों के बीच ही मना सकें।

भिखारी ठाकुर अपने समय में किसी जीनियस से कम नहीं थे। वे पढ़े लिखे नहीं थे, समाजिक हैसियत भी नहीं थी लेकिन वे लोगों के चेहरे पर मुस्कान लाना जानते थे, लोगों का मनोरंजन करना जानते थे। गायकी के अलावा अभिनय और नृत्य को भी उन्होंने साध लिया था। वे कई तरह के वाद्य यंत्रों को भी बजाने लगे थे। इतना ही नहीं उन्होंने गांव के लोगों को इसकी ट्रेनिंग

भोजपुरी के शेक्सपियर

देकर एक मंडली बना ली। वे अपनी नाट्य मंडली के संगीतकार और निर्देशक भी खुद ही थे। उन्होंने गांव के लोगों में से गायक, अभिनेता, लबार (जोकर) और संगीतकारों की टीम बनाई।

भिखारी ठाकुर के पास नाटक करने के लिए कोई मंच नहीं था। वे चौकी (लकड़ी की चारपाई) को किसी पेड़ के नीचे रखकर स्टेज बना लेते थे और ढोलक, झाल और मजीरा के साथ लोगों का मनोरंजन करते थे। असल मायनों में भिखारी ठाकुर को भारत में ओपन एयर थिएटर का जनक माना जा सकता है। भिखारी ठाकुर की नाट्य मंडली कजरी, होली, चैता, बिरहा, चौबोला, बारामासा, सोहार, विवाह गीत, जंतसार, सोरठी, अल्हा, पचरा, भजन और कीर्तिन हर तरह से लोगों का मनोरंजन करने लगी थी। लेकिन भिखारी ठाकुर अपने कविताई अंदाज में जिस तरह से सामाजिक सच्चाइयों को पेश करते थे, उसमें मनोरंजन के साथ साथ तंज भी होता था।

उन्होंने अपनी टीम के साथ सभी तरह की सामाजिक कुरीतियों, मतलब समाज में उपेक्षित लोगों के साथ होने वाले अत्याचार, धार्मिक रुढ़ियों, संयुक्त परिवार के घटते चलन, बाल विवाह, बेमेल विवाह, विधवाओं का दर्द, बुजुर्गों की उपेक्षा, नशाखोरी, दहेज प्रथा और साधु संतों के वेश में ठगतई जैसे तमाम मुद्दों पर लोक गीत बनाए।

भिखारी ठाकुर किस प्रतिभा के धनी थे, इसका अंदाजा इससे लगाया जा सकता है कि वे खुद स्कूल नहीं गए लेकिन उन्होंने लोकगीतों पर 29 किताब लिखीं जो कैथी लिपि में थीं। इन किताबों को बाद में देवनागरी लिपि में बदला गया। इनका पूरा संकलन बिहार राष्ट्रभाषा परिषद ने भिखारी ठाकुर रचनावली के नाम से प्रकाशित किया है। इनमें बेटी वियोग, विदेशिया, ननद भौजाई, गबर घिचौर और कलियुग का प्रेम जैसे लोक नाटक बेहद चर्चित रहे। बेटी वियोग, शादी के बाद घर परिवार से बेटी की विदाई के दुख पर आधारित लोक नाटक है, तो विदेशिया उस महिला के दर्द की दास्तां है जिसका पति आजीविका कमाने के लिए विदेश (दूसरे राज्य) गया हुआ है। ननद–भौजाई, एक बहन और उसके भाई की पत्नी के बीच नोक–झोंक भरे रिश्ते की कहानी है। गबरघिचौर नाटक, एक महिला के सेक्सुअल अधिकारों पर टिप्पणी करता है।

हिंदी साहित्य में भारतेंदु हरिश्चंद्र के नाटकों को जागरण का वाहक माना जाता है। लेकिन उससे काफी पहले भिखारी ठाकुर ने अपने नाटकों में महिलाओं के दर्द और तकलीफ को बखूबी उकेरा है। विदेशिया नाटक की महिला किरदार अपने पति को याद करती है, –

पिया मोरा गैलन परदेस, ए बटोही भैया।
रात नहीं नीन, दिन तनी ना चौनवा।।

भिखारी ठाकुर के लोक नाटकों पर महान हिंदी साहित्यकार राहुल सांकृत्यान ने लिखा है, "हमनी के बोली में कितने जो हवअ, केतना तेज बा, इ सब अपने भिखारी ठाकुर के नाटक में देखिला। भिखारी ठाकुर हमनी के अनगढ़ हीरा हवें।"

भिखारी ठाकुर के एक दूसरे नाटक गबरघिचौर में महिला का पति विदेश कमाने गया हुआ है और वह गांव के किसी अन्य शख्स के साथ संबंध बना लेती है और अपने सेक्सुअल अधिकारों की वकालत करती है,

"घर में रहे दूध पांच सेर,
केहू जोरन देहल एक धार।
का पंचायत होकात बा,
घीऊ साफे भेल हमार।"

भिखारी ठाकुर की करीब तीन चौथाई रचनाएं पद्य के तौर पर हैं जिनमें मेलोड्रामा, भक्ति और सांसारिक प्रेम, उदासी और एकजुटता की खुशी, प्रेम, घृणा और क्रोध, हास्य और तीखे व्यंग्य छंदों में लिखे गए हैं। आमतौर पर, उनके लोक नाटकों के पात्र दलित और निचली जातियों से आते हैं, यह किरादारों के नामों से भी पता चलता है। उपदार, उदवास, झंटुल, चटक, चेथरू, अखाजो और लोभा जैसे नाम उनके किरदारों के रहे हैं।

भिखारी ठाकुर के दौर में ग्रामीण परिवेश में महिला कलाकार आसानी से नहीं मिलते होंगे, यही वजह थी कि वे पुरुषों को महिलाओं की वेशभूषा में महिला किरदार निभाने के लिए प्रेरित करने लगे थे। इस तरकीब के जरिए उन्होंने महिलाओं के मुद्दों को कुशलतापूर्वक दर्शाया और मंचित किया। भिखारी ठाकुर से प्रेरणा लेते हुए दूसरे लोक कलाकारों ने भी नाच पार्टियों का गठन किया, जो टीवी और इंटरनेट के दौर से पहले ग्रामीण समाज में लोगों का मनोरंजन किया करते थे। आज तकनीक और प्रोद्यौगिक का दौर बढ़ा है और मनोरंजन के तमाम नए विकल्प मौजूद हैं। लेकिन क्या उन सवालों का हल मिल गया है जिसे भिखारी ठाकुर ने अपने लोक नाटकों के माध्यम से उठाया था? इसका जवाब है नहीं। आज भी समाज में नशाखोरी और दहेज प्रथा मौजूद है। समाज में आज भी असमानता, भेदभाव और अन्याय मौजूद हैं। जाति और धर्म के नाम पर सामाजिक उत्पीड़न हो रहा है।

कुछ विश्लेषक शिष्टता के साथ भिखारी ठाकुर की तुलना 16वीं सदी के विख्यात नाटककार शेक्सपियर से करते हैं और उन्हें 'भोजपुरी का शेक्सपियर' के रूप में याद करते हैं, लेकिन शैक्षणिक दृष्टि से यह अधिक विवेकपूर्ण है कि भिखारी ठाकुर को भिखारी ठाकुर ही रहने दिया जाए और भारतीय संदर्भ में उनका अधिक अध्ययन किया जाए। जीवन के अंतिम सालों में उन्होंने अपना अधिकांश समय भगवान राम, सीता, कृष्ण और गणेश की भक्ति में बिताए। विरासत में लोक नाटक और लोक कथाओं के विशाल भंडार छोड़कर 10 जुलाई 1971 को पैतृक गांव में भिखारी ठाकुर का निधन हुआ था।

(साभार: www.bbc.com/hindi)

BIHAR STATE MILK CO-OPERATIVE FEDERATION LIMITED.
COMFED
Sudha
COMFED
BIHAR STATE MILK CO-OPERATIVE FEDERATION LIMITED.
E-Mail: comfed.patna@gmail.com | Toll Free No.: 18003456199 | www.sudha.coop

बुद्ध की कहानियां

सदियों से कही जाती हैं जातक कथाएं

जातक या जातक पालि या जातक कथाएं बौद्ध ग्रंथ त्रिपिटक का सुत्तपिटक अंतर्गत खुद्दकनिकाय का 10वां भाग है। इन कथाओं में भगवान बुद्ध की कथायें हैं। मान्यता है कि इन कहानियों को खुद गौतम बुद्ध के द्वारा कहा गया है, हालांकि कुछ विद्वानों का मानना है कि कुछ जातक कथाएँ, गौतम बुद्ध के निर्वाण के बाद उनके शिष्यों द्वारा कही गयी है। विश्व की प्राचीनतम लिखित कहानियाँ जातक कथाएँ हैं जिसमें लगभग 600 कहानियाँ संग्रह की गयी है। यह ईस्वी संवत से 300 वर्ष पूर्व की घटना है। इन कथाओं में मनोरंजन के माध्यम से नीति और धर्म को समझाने का प्रयास किया गया है। सदियों से इन जातक कथाओं को कहा–सुनाया जाता रहा है।

कुशीनगर की कहानी

कुशीनगर का नाम कुशीनगर क्यों पड़ा इसकी एक रोचक कथा है। वही कथा यहाँ प्रस्तुत की जा रही है। मल्लदेश के राजा की रानी शीलवती से दो पुत्र थे। पहला पुत्र बिल्कुल कुरूप था किन्तु समस्त विद्याओं का ज्ञाता। दूसरा पुत्र बहुत ही खूबसूरत था किन्तु बिल्कुल बुद्धिहीन।

कुश एक कुशाग्र बुद्धि का व्यक्ति था। वह जानता था कि उसकी बदसूरती को देख कोई भी कन्या उससे विवाह करना नहीं चाहेगी। फिर भी शीलवती के आग्रह से उसने विवाह करना स्वीकार किया और प्रभावती नाम की एक बहुत ही सुन्दर कन्या से उसकी माता ने उसका विवाह करवा दिया जो सागल देश की राजकुमारी थी। कुश के असल रूप को छुपाने के लिए शीलवती ने प्रभावती से झूठ कहा कि उसकी पारिवारिक परम्परा के अनुरूप प्रभावती और कुश एक दूसरे को तब तक प्रकाश में नहीं देखेंगे जब तक उनका बच्चा गर्भस्थ नहीं होता।

कुछ दिनों के बाद कुश के मन में प्रभावती को देखने की इच्छा उत्पन्न हुई। उसने अपने मन की बात अपनी माता को

बताई। माता ने उसे घोड़ों के घुड़साल में प्रभावती को दिखाने की योजना बनाई। अस्तबल में बैठे एक सारथी के भेष में कुश ने जब प्रभावती को देखा तो उसे एक शरारत सूझी। उसने प्रभावती पर पीछे से घोड़े की लीद (विष्ठा) फेंकी। प्रभावती क्रुद्ध हुई, किन्तु शीलवती के कहने पर वह फिर आगे बढ़ गयी।

इसी प्रकार कुश ने दो–तीन बार अपनी माता की सहायता से प्रभावती को देखा और जितना ही वह उसे देखता उतना ही उसे और देखना चाहता। अतः एक बार माता ने प्रभावती को कमल के जलाशय में भेजा, जहाँ कुश छुपा बैठा था। जब जलाशय में प्रभावती नहाने लगी तो कुश का धैर्य छूट गया। वह तैरता हुआ प्रभावती के पास गया और उसके हाथ पकड़ कर अपना भेद खोला डाला कि वही उसका पति था। उस कुरूप और प्रेत की शक्ल वाले कुश को देख प्रभावती मूर्च्छित हो गयी। जब उसे होश आया तो वह तत्काल अपने मायके चली गयी।

कुश भी उसके पीछे–पीछे उसे मनाने गया और सागल देश में कई प्रकार की नौकरियाँ की। जब वह टोकरी बनाने का काम करता तो प्रभावती को अपना प्रेम संदेश टोकरी की कलात्मकता के साथ भेजता। कभी कुम्हार बनता तो अपने हाथों की कलात्मकता से अपना संदेश भेजता। फिर भी प्रभावती उससे घृणा करती रही। अंततः उसने प्रभावती के घर में रसोईये के रुप में काम कर हर किसी का दिल जीता। फिर भी प्रभावती उससे घृणा करती रही। एक दिन आठ देशों के राजाओं ने मिलकर सागल पर चढ़ाई की। तब कुश ने अपने ससुर के सामने प्रकट होकर सागल को बचाने का प्रस्ताव रखा। अपने जमाई राजा को वहाँ उपस्थित देख सागलराज बहुत प्रसन्न और आश्चर्यचकित हुए। जब उन्होंने कुश को अपनी पुत्री के प्रेम में हर प्रकार का संघर्ष करते देखा तो उससे वह बहुत प्रभावित हुए। उसने प्रभावती को फिर अच्छी फटकार लगाते हुए कुश की प्रशंसा की। प्रभावती ने भी उस संकट की घड़ी में कुश के गुणों को स्वीकारा और सराहा।

कुश के साथ फिर आठ राजाओं की लड़ाई हुई। कुश ने उन आठ राजाओं को पराजित कर उनसे प्रभावती की आठ छोटी बहनों का ब्याह करवा दिया। फिर खुशी–खुशी प्रभावती के साथ मल्लदेश को लौट गया। तभी से मल्लदेश का नाम उसी पराक्रमी राजा कुश के नाम पर पड़ा।

करुणा से मां की पहचान

एक महिला अपने बच्चे को लेकर भावी बुद्ध के तालाब में नहाने के लिए गई। पहले बच्चे को नहलाने के बाद उसने अपना ऊपरी वस्त्र पहना और खुद नहाने के लिए पानी में उतर गई। तभी एक यक्षिणी ने उस बच्चे को देखा और उसे खाने की इच्छा हुई। उसने स्त्री का रूप धारण किया और पास आकर माँ से पूछा, "सखी, यह बहुत सुंदर बच्चा है। क्या यह तुम्हारा ही बच्चा है?" मां ने कहा, हां। तो उसने पूछा कि क्या वह उसे दूध पिला सकती है। और जब उसे इसकी अनुमति मिली, तो उसने उसे थोड़ा दूध पिलाया और फिर उसे ले गई। लेकिन जब माँ ने यह देखा, तो वह उसके पीछे दौड़ी और चिल्लाकर बोली, "तुम मेरी बच्ची को कहाँ ले जा रही हो?" और उसे पकड़ लिया। यक्षिणी ने साहसपूर्वक कहा, "तुमने यह बच्चा कहां से लिया? यह मेरा है!" और इस तरह झगड़ते हुए वे भावी बुद्ध के न्याय–कक्ष के द्वार से गुजरे।

उन्होंने जमीन पर एक रेखा खींची और यक्षिणी से कहा कि वह बच्चे की बाहें पकड़ ले, और माँ उसके पैर पकड़ ले और कहा, "जो उसे रेखा के पार खींच लेगी, बच्चा उसका होगा।" लेकिन जैसे ही उन्होंने उसे खींचा, माँ ने देखा कि बच्चा कैसे तड़प रहा है, उसे ऐसा दुख हुआ मानो उसका दिल टूट जाएगा। और उसे छोड़ कर वह वहीं खड़ी होकर रोने लगी। तब भावी बुद्ध ने वहां खड़े लोगों से पूछा, "किसका हृदय शिशुओं के प्रति कोमल है? उनका जिन्होंने बच्चे पैदा किए हैं, या उनका जिन्होंने नहीं?" उन्होंने उत्तर दिया, "हे महाराज! माताओं का हृदय कोमल होता है।" फिर भावी बुद्ध ने पूछा, "तुम्हारा क्या विचार है, माँ कौन है? वह जिसकी गोद में बच्चा है, या वह जिसने बच्चे को छोड़ दिया है?" उन्होंने उत्तर दिया, "जिसने जाने दिया है वह माँ है।"

फिर भावी बुद्ध ने कहा, "तो फिर क्या तुम सब लोग सोचते हो कि दूसरा व्यक्ति ही चोर था?" उन्होंने उत्तर दिया, "महाराज! हम नहीं बता सकते।" भावी बुद्ध ने कहा, "निश्चय ही यह एक यक्षिणी है, जो बच्चे को खाने के लिए ले गयी। क्योंकि उसकी आंखें नहीं झपकती थीं, और लाल थीं, और उसे कोई डर नहीं था, और उसे कोई दया नहीं थी, इसलिए मैं यह जानता था।" यह कहकर उसने चोर से पूछा, "तुम कौन हो?" और वह बोली, "प्रभु! मैं एक यक्षिणी हूँ। बच्चे को खाना चाहती थी।" भावी बुद्ध ने यक्षिणी को फटकारा और उसे पाँच आज्ञाएँ मानने की शपथ दिलाई, और उसे जाने दिया। लेकिन बच्चे की माँ ने भावी बुद्ध की प्रशंसा करते हुए कहा, "हे मेरे प्रभु! हे महान चिकित्सक! आपकी आयु लंबी हो!" और वह अपने बच्चे को अपनी छाती से लगाए हुए चली गई।

केरल की लोककथा

ओणम और महाबलि का आगमन

श्रावण मास में आने वाला ओणम का त्योहार अपने साथ बहुत सी खुशियाँ लाता है। केरल राज्य पूरे चार दिन तक आमोद प्रमोद में डूब जाता है। इस त्योहार से एक रोचक प्रसंग भी जुड़ा है।

कहते हैं कि प्राचीनकाल में केरल राज्य में महाबलि असुर का राज्य था। राज्य में चारों ओर समृद्धि और खुशहाली थी। महाबलि अपनी प्रजा को बहुत चाहते थे। किंतु देवों को महाबलि की बढ़ती लोकप्रियता से चिंता होने लगी। वे नहीं चाहते थे कि असुरों का शासन फले–फूले। महाबलि ने अपनी योग्यता के बल पर तीनों लोकों पर अधिकार कर लिया। तब तो भगवान इंद्र का सिंहासन भी डोल गया। वे भागे–भागे महाविष्णु के पास पहुँचे और प्रार्थना की। तब महाविष्णु ने उन्हें विश्वास दिलाया, ''मैं पृथ्वी पर वामन का अवतार लेकर जाऊँगा और महाबलि से उसका राज्य छीन लूँगा।''

महाविष्णु ने ठिगने कद के एक ब्राह्मण का रूप धारण किया और महाबलि के महल में जा पहुँचे। महाबलि ब्राह्मण अतिथियों का बहुत आदर करते थे। उन्होंने वामन के चरण धोए और स्वागत–सत्कार के बाद पूछा, ''मैं आपकी क्या सेवा कर सकता हूँ?'' ''मुझे केवल तीन कदम धरती चाहिए।'' वामन ने उत्तर दिया। ''केवल तीन कदम धरती से क्या करेंगे?''महाबलि ने आश्चर्य से पूछा। ''मुझे वहाँ बैठकर तपस्या करनी है?'' वामन कुमार का उत्तर सुनकर महाबलि ने प्रसन्नतापूर्वक तीन कदम धरती देने का वचन दे दिया। असुरों के गुरु शुक्राचार्य ने वामन वेषधारी महाविष्णु को पहचान लिया। उन्होंने महाबलि से अकेले में कहा, ''अपना वचन वापिस ले लो। यह वामन तुम्हें कहीं का नहीं छोड़ेगा।'' महाबलि अपने वचन के पक्के थे। वे बोले, ''अब तो मैं बचन दे चुका हूँ। जो भी होगा, देखा जाएगा।'' अगले दिन महाबलि अपने सिंहासन पर बिराजे। वामन कुमार ने एक बार फिर पूछा– ''क्या मैं तीन पग धरती ले लूँ?'' ''हाँ अवश्य।'' महाबलि ने उत्तर दिया। देखते–ही–देखते वामन कुमार का शरीर विशाल रूप धारण करने लगा। उनका कद इतना बढ़ गया कि तीन लोक तो दो कदमों में ही आ गए। उन्होंने हँसकर महाबलि से पूछा– ''अब मैं तीसरा कदम कहाँ रखूँ?'' महाबलि ने अपना सिर झुका दिया और वामन ने अपना तीसरा पग उस पर रख दिया। महाबलि पाताल लोक में चले गए। जाने से पहले उन्होंने वर माँगा, ''क्या मैं वर्ष में एक बार अपनी प्यारी प्रजा को देखने आ सकता हूँ?'' महाविष्णु ने कहा– ''हाँ, तुम प्रतिवर्ष श्रावण मास में आ सकते हो।'' तब से श्रावण मास के श्रवण नक्षत्र में महाबलि केरल आया करते हैं और ओणम मनाया जाता है।

BIHAR TOURISM
Blissful Bihar

VISIT BIHAR

The place of Enlightenment and Wisdom. A world famous UNESCO heritage site Mahabodhi Temple.

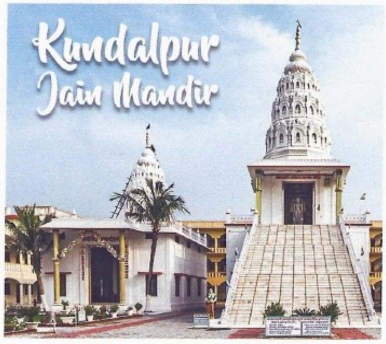

Kundalpur Jain Mandir holds both spiritual and historical significance as it is believed to be the birthplace of Lord Mahavira.

A sacred place built to commemorate the birthplace of Shri Guru Gobind Singh ji Maharaj, the 10th Guru of Sikhs.

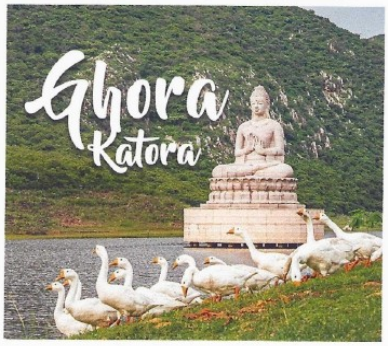

A picturesque natural lake with lush green surroundings.

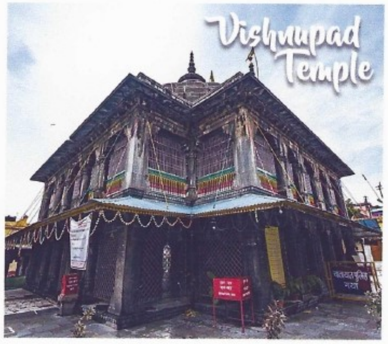

One of the oldest and most prominent Hindu temples dedicated to Lord Vishnu where pilgrims perform 'Pind Daan' ritual for their ancestors.

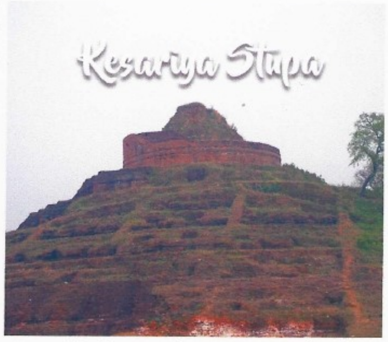

Situated in the East Champaran Kesariya Stupa is the Wolrd largest Stupa among all the buddhist stupas.

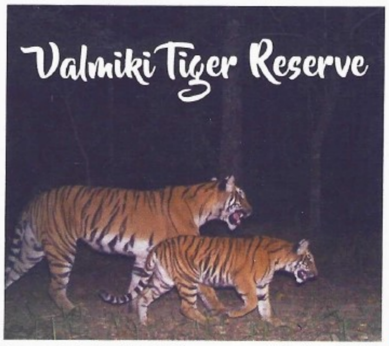

Situated in the West Champaran district of Bihar, the green landscapes with wildlife sightings is a must-visit spot for nature & adventure lovers.

Bihar's first Glass Bridge at Rajgir's Nature Safari offers a breathtaking view of the beautiful surroundings.

Best Places to Visit in Bihar

BIHAR TOURISM
Blissful Bihar

"Bihar, a land of rich cultural and spiritual heritage, offers a blend of history, spirituality, and natural beauty. From the UNESCO World Heritage Site Mahabodhi Temple to the serene Ghora Katora Lake and the wild allure of Valmiki Tiger Reserve, the state is a treasure trove for travelers. Explore timeless temples like Vishnupad Temple, dedicated to Lord Vishnu, and Kundalpur Jain Temple, celebrating Lord Mahavira's birthplace. Don't miss Patna Sahib, the birthplace of Guru Gobind Singh Ji, the 10th Sikh Guru. Bihar invites you on a journey of sacred shrines, scenic landscapes, and unmatched tranquility."

@tourismbihargov

www.tourism.bihar.gov.in

www.emanjari.com

इक्विटी फाउंडेशन
123 ए, पाटलीपुत्र कॉलोनी
पटना, 13

equityasia@gmail.com
www.emanjari.com
06122270171
6207092051
7979772023

RNI Title Code: BIHBIL02442

© इक्विटी फाउंडेशन